तिरुमल श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव वैभव

हिन्दी अनुवाद

डॉ. एम. आर. राजेश्वरी

तेलुगु मूल

डॉ. के. वी. राघवाचार्या

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति

2018

TIRUMALA SRI VENKATESWARA SWAMY KA BRAHMOTSAVA VAIBHAV

Hindi Translation
Dr. M. R. Rajeswari

Telugu Original
Dr. K. V. Raghavacharya

T.T.D. Religious Publications Series No. 1281
©All Rights Reserved
First Edition - 2018

Copies:

Published by
Sri Anil Kumar Singhal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
Tirupati.

D.T.P:
Publications Division,
T.T.D, Tirupati.

Printed at :
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
Tirupati

प्राक्कथन

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी, कलियुग के प्रत्यक्ष दैव हैं। श्रीमन्नारायण ने वैकुंठ को छोडकर, अपने भक्तों पर कृपावृष्टि करने के लिए एवं इस प्रसू के प्राणियों को मनोवांछित वर प्रदान करने के लिए वेङ्कटाद्रि पर श्रीनिवास का रूप धारण किया। कन्यामास (सितम्बर-अक्तूबर) में ध्वजारोहण से ध्वजावरोहण तक, नौ दिनों का उत्सव मनाने के लिए ब्रह्म ने श्रीनिवास से अनुमति ली। उस दिन से यह उत्सव ब्रह्मोत्सव कहलाने लगा। सप्ताचलाधीश के लिए मनाये जानेवाले उत्सवों में यह सबसे बड़ा उत्सव है, जिसे सफ़ल बनाने के लिए बहुतेरे भक्तगण दिन-रात परिश्रम करते रहते हैं।

जिस पर्वत पर श्रीनिवास मूर्तिभूत हुए, उस पर्वत का नाम 'वेङ्कट' है। उस पर्वत पर रहनेवाले का नाम वेङ्कटेश पडा और बाद में वेङ्कटेश्वर के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

यह पुस्तक तेलुगु में श्रीवेङ्कटेश्वर लिटरेचर के शोधाधिकारी, डॉ.के.वी. राघवाचार्या, के द्वारा 'वेङ्कटेश्वर वैभवम्'' नामक शीर्षक से लिखा गया। इस पुस्तक को डॉ.एम.आर. राजेश्वरी ने हिन्दी में अनूदित किया।

आशा करता हूँ कि श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के भक्त गण, एवं पुस्तक के पाठक इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे और भगवान के कृपा कटाक्ष प्राप्त करेंगे।

सदा श्रीहरि की सेवा में,

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्,
तिरुपति

प्रस्तावना

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के लिए जितने उत्सव मनाये जाते हैं, उनमें ब्रह्मोत्सव का विशिष्ट स्थान है। कन्यामास में, श्रवणा नक्षत्र के दिन को अवभृत स्थान (चक्रस्नान) स्थापित करके उससे पहले के नौ दिनों में ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है। ब्रह्म ने इसे महिमोत्सव के रूप में व्यवस्थित किया था। ब्रह्म से करने के कारण ये, उत्सव ब्रह्मोत्सव कहलाये। संस्कृत कोष में 'ब्रह्म' शब्द को संख्या 'नौ' के लिए सूचित किया गया है। ध्वजारोहण से प्रारंभ होकर ध्वजावरोहण तक समाप्त होने वाले नौ दिनों का उत्सव 'ब्रह्मोत्सव' नाम से अभिहित किया गया। इस ग्रंथ में तिरुमल के वार्षिक ब्रह्मोत्सव का इतिहास एवं वाहन सेवाओं की विशिष्टताओं का वर्णन चित्रों के साथ प्रस्तुत किया गया है। श्रीकृष्णदेवराय के द्वारा स्थापित भव्य, उत्कृष्ट, विशिष्टता युक्त उत्सव परम्परा, को गरुड़ सेवा के संदर्भ में गोदा देवी से पहनी गई फूलमालाओं को निकालकर श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी को पहनाते हैं। ताल्लपाक अन्नमाचार्य, तरिगोंड वेंगमांबा, श्रेष्ठलूरि वेङ्कटराय और ऐसे महान कवियों के द्वारा विस्तार से इस ग्रंथ में प्रस्तुत किया गया है। इस पुस्तक में तिरुमल ब्रह्मोत्सव पर एक ब्रिटिश अफ़सर के द्वारा 1831 वर्ष में लिखा गया लेख कोलकत्ता के एशियाटिक जर्नल में छपा था, उसे यहाँ प्रस्तुत किया गया है। आशा करते हैं कि श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव वैभव पर लिखा गया यह ग्रंथ पाठकों एवं भक्तों को आह्लाद और ज्ञान प्रदान करेगी।

के. वी. राघवाचार्या
श्रीवेङ्कटेश्वर साहित्य शोधक

1. श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का ब्रह्मोत्सव वैभव

वेङ्कटेश समो देवो न भूतो न भविष्यति

(तिरुमल श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के समान देव इसके पहले कभी नहीं हुआ था और भविष्य में कभी नहीं होगा)

''आदौ कलियुगे जम्बूद्वीपे भारत वर्षे
गंगायाः दक्षिणे भागे योजनानाम् शतद्वये ।।
पंच योजन मात्रे तु पूर्वाम्भोधेस्तु पश्चिमे
मासे भाद्रपदे विष्णु तिथौ विष्णु समन्विते ।।
सिद्ध योगे सोमवारे गिरौ नारायणाह्वये
स्वामि पुष्करिणी तीरे पश्चिमे भूत्यपश्चिमे
बृन्दारकाणाम् बृन्दैस्तु प्रार्थितो लोकरक्षकः
आविर्बभूव भगवान श्रीनिवासः परः पुमान ।।''

- पद्म पुराण, 33-124 -127

बहुत समय पूर्व, भारतवर्ष के जम्बूद्वीप में, गंगा की दक्षिण दिशा में, दो योजन की दूरी पर, स्वामि पुष्करिणी से पाँच योजन पूरब की दिशा में, कन्यामास युक्त भाद्रपद में, सोमवार के दिवस, श्रवणा नक्षत्र के लगने पर, सिद्ध योग में, समस्त देवताओं के समवेत प्रार्थना पर, समस्त लोकों के रक्षक, दिव्य पुरुष, श्रीनिवास भगवान ने अवतार धारण किया। पद्मपुराण इसका वर्णन करता है।

''मायावी परमानंदः त्यक्त्वा वैकुंठमुत्तमम्
स्वामि पुष्करिणी तीरे रमया सह मोदते ।।''

- शेषधर्म, हरिवंश, 48 - 15

उपर्युक्त पंक्तियाँ शेषधर्म के हरिवंश की हैं, जिसका वर्णन है - अवर्णनीय परमानंदप्रद वैकंठ से श्रीमन्नारायण भ्रामक रुपधारी बनकर पुष्करिणी के कूल पर अपनी पत्नी लक्ष्मी देवी के साथ भ्रमण कर रहे थे।

ब्रह्म और अन्य देवता, स्वामी को ढूँढ़ते - ढूँढ़ते वेङ्कटाद्रि पर पहुँचे जहाँ वैकुंठनाथ लोकरक्षक बनकर वेङ्कटाद्रि को अपना स्थिर आवास बनाया हुआ था। स्वामी को वहाँ पाकर, देवता सभी बहुत संतुष्ट हुए। नारायणगिरि पर अवतार धारण करने वाले लोक रक्षक एवं अपने भक्तों को भवबंधनों से मुक्ति प्रदान करनेवाले विष्णु को ब्रह्म ने नमन प्रस्तुत किया और इस प्रकार कहा -

'स्वामी श्रियः पति, मैं आपके सम्मान में एक भव्य उत्सव मनाना चाहता हूँ, जो ध्वजारोहण से प्रारंभ होगा। आप कृपया लक्ष्मी देवी के साथ इसका वीक्षण करो।' लक्ष्मी नारायण ने अपनी सम्मति प्रस्तुत की। श्रीनिवास की स्वीकृति पाने के पश्चात् तिरुमल में ब्रह्मोत्सव का प्रारंभ हुआ।

ब्रह्मोत्सव की परिभाषा

सृष्टिकर्ता ब्रह्म ने नौ दिनों के लिए ब्रह्मोत्सव तब मनाया जब सूरज का पारगमन कन्यामास में हुआ (चंद्रमान के अनुसार आश्वीयुज में)। श्रवणा नक्षत्र, जो श्रीमन्नारायण का जन्म नक्षत्र है, उस दिन को अवभृथ स्नान (चक्र स्नान) स्थापित किया। हस्ता नक्षत्र युक्त शुक्लपक्ष विदिया से नौ दिन पूर्व, इसे प्रारंभ किया। विखनस, भृगु, मरीचि जैसे ऋषियों (ऋत्विकों) का आह्वान करके, उनकी उपस्थिति में उत्सव को ध्वजारोहण

से प्रारंभ किया और नौ दिनों का ब्रह्मोत्सव विधिवत मनाया। आज के ब्रह्मोत्सव उसी बुनियाद पर खड़ी है।

इसे प्रमाणित करने के लिए तथा भक्तों में वेङ्कटेश्वर स्वामी के अवतार नक्षत्र श्रवणा को श्रवणा का स्मरण कराने के लिए कन्यामास के श्रवणा नक्षत्र के दिन अवभृथ स्नान को स्थापित करके, ब्रह्म द्वारा प्रविष्ट उत्सव (ब्रह्मोत्सव) आज भी मनाये जा रहे हैं।

तरिगोंड वेंगमाम्बा ने अपनी कृति वेङ्कटाचल माहात्म्यम् (2 - 120) में उसका वर्णन निम्नलिखित रूप से किया -

''.....कन्याराशि यंदु सूर्यु
डमर ब्रवेशिंचि नट्टि मासमुन जि
त्राख्य नक्षत्रम्बु नंदु शास्त्र
मभिमतंबुग सध्वजारोहणमु चेसि
युत्तराषाढ़ रथोत्सवम्बु
गाविंचि श्रवण नक्षत्रमंदे तीर्थ
वारि जेयिम्पगा वलयु'' **2 - 120**

.....कन्याराशि में सूर्य
जिस महीने में प्रवेश करता है
चित्रा नक्षत्र के लगते ही
शास्त्रोक्त ढंग से ध्वजारोहण कर
उत्तराषाढ़ को रथोत्सव
श्रवणा नक्षत्र को
तीर्थ वारि करना होगा 2 - 120

वेदोक्ति है कि - 'ऋतगम् सत्यं परब्रह्म, एकमेव अद्वितीयम् ब्रह्म, नारायणम् परब्रह्म' - इसका अर्थ है, परब्रह्म, स्वयमेव नारायण ही है, कोई अन्य नहीं। ब्रह्मोत्सव, उसी परब्रह्म के नाम पर मनाये जानेवाला उत्सव है। ब्रह्म से स्थापित होने के कारण, यह ब्रह्मोत्सव है। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव को प्रामाणिक बनाने के लिए, आज भी ब्रह्मोत्सव के दौरान, हर वाहन के आगे चाहे वाहन सुबह का हो या रात का, एक छोटा भव्य रूप से सुअलंकृत ब्रह्मरथ आगे - आगे चलता है। अरुपी, निर्गुण ब्रह्म इस रथ में प्रतीकात्मक रूप से आरुढ़ होकर ब्रह्मोत्सव का आयोजन करता है। लेकिन रथोत्सव के दिन, रथ के आगे ब्रह्मरथ नहीं रहता क्योंकि उस समय श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी स्वयं परमब्रह्म का आराध्य अवतारमूर्ति होता है। इस दिन को ब्रह्म स्वयं रथ का रथसारथी बनकर, अदृश्य रूप में श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के रथ को हाँकते हैं।

नौ दिवसीय पर्व

नवमम् नवरत्नम् च ब्रह्मा च कमलासनः
निधिःग्रहाश्च खंडम् च रंध्रो भवश्च लब्धकः ॥

नवमम्, नवरत्नम्, ब्रह्म, कमलासन, निधिः, ग्रहः, खण्ड, रंध्र, भव और लब्धकः - ये दस नाम नौ संख्या के सूचक हैं। संज्ञा कोष में, ब्रह्म को नौ ब्रह्म के रूप में सूचित किया गया है और इसलिए संख्या 'नौ' प्रतीकात्मक है। ध्वजारोहण से प्रारंभ होकर ध्वजावरोहण तक समाप्त होनेवाला ब्रह्मोत्सव नौ दिनों के लिए मनाया गया। इसलिए नौ दिवसीय उत्सव को 'ब्रह्मोत्सव' कहना समुचित ही है।

नौ दिवसीय ब्रह्मोत्सवों के अलावा, तिरुमल में अतिरिक्त रूप से एक दिवसीय तीन ब्रह्मोत्सव तीन बार मनाये जाते हैं, यथा - आर्ष

ब्रह्मोत्सवः रथसप्तमी के दिन, राक्षसंः कैशिक द्वादशी के दिन, दैविकंः मुक्कोटि एकादशी के दिन।

ब्रह्म ने श्रीवेङ्कटेश्वर के ब्रह्मोत्सव में सभी देवताओं को आमंत्रित किया। इन्द्र और अष्टदिक्पालक अपने-अपने रथों पर आरुढ़ होकर वेङ्कटाद्रि पर आ पहुँचे। भारत वर्ष के सभी भक्त भी तिरुमल आ गए। 'गोविन्द' नाम स्मरण करते हुए अनेक भक्तवृन्द, इस पुण्य-पवित्र पर्वत पर आ गए। बडे-बडे योगियों को भी साक्षात्कार में नहीं मिलनेवाले श्रीनिवास स्वामी ने, इस पृथ्वी के सामान्य भक्तों के उद्धार के लिए तिरुमल पर प्रत्यक्ष रूप धारण किया। ब्रह्म ने प्रवर शिल्पी विश्वकर्मा को बुलाया। तिरुमल और उसके परिसर प्रातों में ठहरनेवाले देवता, मनुष्य जाति के लिए मकान, धर्मशालाएँ, शरण स्थान बनाने की आज्ञा दी। साथ-ही-साथ पीने के लिए पानी की व्यवस्था करने के लिए कहा। आज्ञानुसार शिल्पी ने सभी भक्तों, आमंत्रित सदस्यों एवं अतिथियों के लिए सारी सुविधायें प्रदान की। जितने लोगों ने इस ब्रह्मोत्सव में भाग लिया, उन सबों ने ब्रह्म का यशोगान करते हुए ऐसा कहा -

अंगीचकार विधिना निर्मितम् च महोत्सवम्
उत्सवे दर्शनम् पुण्यम् श्रीनिवासस्य शार्ङ्गिणः ॥

श्रीनिवास ने ब्रह्म को उत्सव मनाने के लिए अनुमति दी। ब्रह्म उसे बहुत अच्छी भाँति निभा रहे हैं। ब्रह्मोत्सव के दौरान धनुर्धारी श्रीनिवास का दर्शन लेना शुभकारक होता है। तिरुमल की गलियाँ हरित तोरणों से सुसज्जित हैं, अमूल्य रत्नों के तोरण, पुष्पमालाएँ, केले वृक्षों के स्तम्भ, आदि गलियों के सौंदर्य को बढ़ा रही हैं। ऋषियों ने वेदमंत्रों का पठन करते हुए यज्ञ किया। कुबेर द्वारा प्रदत्त अमूल्य आभूषणों से ब्रह्म ने

श्रीनिवास का अलंकरण कर विशिष्ट सेवायें प्रस्तुत की। उनहोंने छः प्रकार के दाल मिश्रित नैवेद्य जैसे-गुडान्न, मुद्गान्न, मधुरान्न, दध्यान्न, तिलापूपा, माशापूपा, मनोहरा, मोदक, और अमृत समान पेय पदार्थ, अनेक प्रकार के स्वादिष्ट फ़ल, रसैले व्यंजन आदि भगवान को समर्पित किया।

उच्चैश्रवसमश्वंच गजमैरावतम् तथा
अनंतम् नागराजं च गरुडं च त्रयी मयम्
एकैकम् समधिष्ठाय वेङ्कटाद्रि शिखामणिः
दिने दिने सुरांत्सर्वान् उत्सवार्थम् समागतान्
अनुजग्राह रथ्यायाम् अटन् भूम्या श्रियान्वितः

श्रीदेवी-भूदेवी समेत भगवान श्रीनिवास, तिरुमल की पुरवीथियों में शोभायात्रा के लिए जब निकले, तो सभी की दृष्टि उनकी ओर आकृष्ट हुई। एक दिन वह उच्चैश्रव के समतुल्य अश्ववाहन पर आरुढ़ होकर, अगले दिन ऐरावत समान गजवाहन पर, किसी दिन को आदिशेष और कभी गरुड़ (जो वेदों का मूर्त रूप है), पर आरुढ़ होकर भ्रमण करता है। उस उत्सव में जो भी मानव, देवता या भक्त आये, उन सब पर भगवान श्रीनिवास ने अपनी कृपावृष्टि बरसाई। वाहन सेवाओं के आगे तंत्रीय एवं वायव्य वाद्यों को बजाया जा रहा था, जो ऐसा लग रहा था मानों स्वयं गंधर्व ही उन्हें बजा रहे हों। अप्सरायें उनका अनुकरण करती हुई नृत्य कर रही थीं। श्रीनिवास का गुणगान वन्दि एवं मागध कर रहे हैं। संपन्न लोगों ने, भक्तों को मकान और सोने के भेंट भी दिए। ''श्रीनिवासोत्सव दिनम् पुण्यं पापप्रणाशनम्''- श्रीनिवास का जब उत्सव होता है, उस दिन को सभी के पाप धुल जाते हैं और सभी पर भगवान

की कृपावृष्टि होती है - ऐसा कहते हुए यात्रियों ने उत्सवों के आयोजक ब्रह्म, की प्रशंसा करने लगे। ब्रह्म ने ब्रह्मोत्सव के समय दिन में दो वाहन सेवायें, तथा तीन बार नैवेद्य का आयोजन किया था, उससे प्रसन्न होकर श्रीनिवास भगवान ने ऐसा कहा -

कमलज! नी संकल्पमु
क्रममुग फलियिन्चे, मोद कलितुड नैतिन्
सुमहितमुग नी युत्सव
ममरग ब्रह्मोत्सवाख्य नवनिन् वेलयुन्

हे कमलज! तुम्हारा संकल्प
फलीभूत हुआ क्रम से, मैं प्रसन्न हुआ
तेरे द्वारा आयोजित उत्सव महिमान्वित हुआ
ब्रह्मोत्सव बनकर इस पृथ्वी पर रहेगा

- ''हे ब्रह्म! तुम्हारी इच्छा पूरी हुई। मैं बहुत प्रसन्न हूँ। ये उत्सव आगे से ब्रह्मोत्सव कहलायेंगे। तुमसे आयोजित रथोत्सव का जो भी वीक्षण करेंगे, वे सागर रूपी भवबंधनों को आसानी से पार करेंगे, कृपा के पात्र बनेंगे और जन्म-मृत्यु वलय से मुक्त हो जायेंगे। मैं उन पर दयावीक्षण करूँगा। वे मुझ पर जितना विश्वास रखेंगे, मेरी उतनी ही कृपा उन पर रहेगी।''

श्रीनिवास भगवान आगे कहने लगे -

ई सवम्बुन भक्तितो नेव्वरैन
नन्न वस्त्रार्थ गृह पात्र लार्यजनुल
कोनरगा दानमुलु सेयुचुन्न धन्यु
लनुभविंतुरू भाग्यम्बु लवनियंदु

इस उत्सव में भक्तिपूर्वक जो भी
अन्न वस्त्र गृह बर्तन को आर्यजन
दान में दे रहे, वे धन्यात्मा होंगे
इस प्रसू पर भाग्यवान बनेंगे

''जो लोग इस यज्ञ रूपी ब्रह्मोत्सव (उत्+सव=उत्सव) के दौरान निर्धन, अपेक्षित व भक्तों को खाना, वस्त्र, धन, मकान या बर्तनों को दान में देंगे, वे भगवान के कृपा पात्र बनेंगे और भविष्य में संपन्न बनेंगे व संतोषजनक जीवन बितायेंगे - '' ऐसा कहते हुए, श्रीनिवास ने ब्रह्म से वर माँगने को कहा।

ब्रह्म ने श्रीनिवास भगवान को नमन करते हुए कहा -

देव इंदरिकिनि दृश्युंड वगुचु
श्री वेङ्कटाचल शिखरंबु नंदे
ई लागु प्रति वर्ष मिम्महोत्सवमु
चाल गै कोनुदु ब्रसन्नत मेरय
वरदुडवै एल्लवारि रक्षिम्प
गरूण जेयुचु नुंड गावले निदिये

हे स्वामी! सभी के लिए साक्षात्कार देकर
इसी वेङ्कटाचल पर
हर वर्ष इस उत्सव को इसी प्रकार
सभी के लिए तुम प्रसन्नमुखी बनकर
वरप्रदाता बनकर सभी की रक्षा करने
करूण वृष्टि बरसाने वाले बने रहो

- ''हे भगवान! आप कृपया इस वेङ्कटाचल पर स्थापित हो जाइए ताकि सभी लोग साक्षी बनकर आप को देखें। हर वर्ष इस प्रकार के उत्सव को मनाने की अनुमति दो। कृपा करके सभी की रक्षा करो, सभी को वर प्रदान करो और सभी पर कृपावृष्टि करो। यही मेरी इच्छा है, इसकी तुम पूर्ति करो।'' श्रीनिवास ने प्रसन्न होकर वर प्रदान किया।

पङ्कजासन! नीवु प्रार्थिंचि नटुल
वेङ्कटगिरियंदे विहरिंतु नेपुडु
सकल लोकमुलकु साक्षाद्विंचि
प्रकटित सर्व संपदल नोसंगुदुनु

हे पंकजासन! तुम्हारी प्रार्थना के अनुसार
वेङ्कटगिरि पर विहार करूँगा
समस्त लोकों में साक्षीभूत होकर
सर्व संपदा को प्रदान करता रहूँगा

''ब्रह्म, तुम्हारी इच्छा के अनुसार मैं वेङ्कटाद्रि पर अवतार ग्रहण करूँगा, सभी लोगों की रक्षा करूँगा, उन पर अनुग्रह भी करूँगा और उन्हें संपदा एवं संतोष प्रदान करूँगा।'' उनके वचन सत्य हैं, वह कलियुग के प्रारंभ से लेकर श्वेत वराह कल्प के अंत तक वेङ्कटाद्रि पर स्थिर रहेंगे। ब्रह्म की प्रार्थना पर श्रीमन्नारायण स्वयं वेङ्कटाद्रि पर अवतार ग्रहण करके प्राणिकोटि को अपनी पूजा करने का अवसर प्रदान कर रहा है। ब्रह्म द्वारा प्रारंभित ब्रह्मोत्सव (पूरे विश्व को आनंद प्रदान करनेवाला) को एक विशेष पहचान देते हुए, 'वेङ्कटेश्वर अष्टोत्तरशतनाम' में ऐसा प्रस्तुत है - 'ओम् ब्रह्म कृतोत्सव श्रीवेङ्कटेशाय नमः (49)। इसका अर्थ है - 'ब्रह्म द्वारा आयोजित उत्सवों को स्वीकारने वाले श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी को

नमस्कार।' ब्रह्म, एक अभिमंत्रित श्रेष्ठ आत्मा है। ब्रह्म द्वारा श्रीनिवास को समर्पित उत्सव को देखने के लिए देवता, साधु और प्रजा आई, सभी प्रसन्न हुए, और सोचने लगे -

येमि तपं बोनर्चितिमो ये सुकृतम् बोनरिंचिनामो ये
नोमुलु नोचिनारमो मनोरथमुलू मदि दैलु वारगा
गामित दान पाटवमु गल्गिन तण्ड्रिनि वेङ्कटाचल
स्वामिनि जूडगंटिमि शुभम्मुलु गूड नघम्मुलूडगन्

कौन-सी तपस्या हमने की, कौन-सा सुकर्म किया हमने
क्या ही व्रत रखा हमने
हरेक के पापाों का शमन करता
श्रीनिवास को देखने का भाग्य हमें मिला

वेङ्कटाचलपति के पास हमारी सारी इच्छाओं की पूर्ति करने की शक्ति है, वह सभी लोगों के पिछले जन्मों के पापों का शमन करता है, सभी पर आशीर्वचन बरसाता है। ऐसा सोचते - सोचते सभी लोग श्रीनिवास भगवान से विदा लेकर, अपने - अपने स्वस्थान लौट गये।

ब्रह्मोत्सव का इतिहास

दसवीं शताब्दी की तमिल भाषा के एक अभिलेख में प्रथम बार तिरुवेङ्कटनाथ के ब्रह्मोत्सव का प्रस्ताव हुआ है। श्रीवेङ्कटेश्वर मूलविराट का प्रतिनिधि रजत मूर्ति, जिन्हें भोग श्रीनिवास मूर्ति (मनवालप्पेरुमाल), कौतुक मूर्ति कहते हैं, और जो नित्यप्रति अभिषेक, एकांत सेवा, सहस्र कलषाभिषेक जैसी सेवायें स्वीकृत करती है, उसे पल्लव राज्य के अधिकारी, शक्तिविकटन की धर्म पत्नी 'सामवै पेरुनदेवी' ने भेंट दिया था। यह मूर्ति, शुक्रवार को, बहुल तदिया के दिन, श्रवणा नक्षत्र के लगने

पर, अक्षय नामक वत्सर में, ज्येष्ठ मास के सन् 8.6.966 को, तिरुविलान कोइल (आज का स्नपन मण्डप) में प्रतिष्ठित की गई थी (अभिलेख - I - 8,9, ति.ति.दे, 1988 को देखिए)। सामवै पेरुनदेवी (जिनके नाम से तिरुमल में पेरुनदेवी उद्यान विद्यमान है), ने इच्छा प्रकट की थी कि पेरटासी महीने (कन्या आश्वीयुज) में चित्तिरै नक्षत्र के लगने पर जो ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है, उस संदर्भ में उनके द्वारा भेंट में दी गई रजत मूर्ति को उत्सव मूर्ति बनाई जाये। उसने स्वामी को बहुत सारे आभूषण भेंट में दिये, जिनमें माण्क्यि, मरकत, मुक्ताओं के साथ-साथ अमूल्य रत्न जडित मुकुट, मकरकुंडल, कंठहार, भुजकीर्तियाँ, कंकण, सुवर्ण कटिबंध, अमूल्य उदर पट्टी आदि थे। उसने ब्रह्मोत्सव में बनाये जाने वाले नैवेद्य, पेरटासि मार्गलि (मुक्कोटि एकादशी) मास में मनाये जानेवाले उत्सवों के खर्चे के लिए 4177 कुलि भूमि को भेंट में दिया। अभिलेख की अंतिम पंक्तियों में उन्होंने ऐसी प्रार्थना की - ''एन इत्तन मम् इरक्षिप्पार श्रीपादम् एन तलै मेलदु, श्री वैष्णवरगल इरक्षै'' (मैं उन महानुभावों के चरण में नतमस्तक होऊँगी जो मेरी भेंट की रक्षा करेंगे। श्रीवैष्णव इसकी रक्षा करें)। क्या ही उदारता है! उनकी इच्छा आदर्शप्राय नहीं है क्या? तिरुमल श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी मंदिर के प्रथम प्राकार की उत्तर दिशा में सन् 966 में उसकी भेंट का विवरण अभिलेख के रूप में देखने को मिलता है। सामवै के दान शासन अभिलेख के अनुसार हमें यह ज्ञात हुआ है कि दसवीं शताब्दी में तिरुमल के ब्रह्मोत्सव ग्यारह दिनों के लिए मनाये जा रहे थे (मुख्य पर्व नौ दिनों का)। मंदिर के अधिकारियों एवं अर्चकों ने भोग श्रीनिवास मूर्ति को कौतुक मूर्ति (मूलविराट वेङ्कटेश्वर स्वामी की प्रतिनिधि मूर्ति) एवं उग्र नरसिंह मूर्ति (स्नपनबेरम्) को उत्सव मूर्ति के रूप में माना। सन् 1339 को मलयप्प कोना(घाटी)

में मिली मलयप्प स्वामी की मूर्ति तत्समय से उत्सव मूर्ति बनी। इसी मलयप्प स्वामी को श्रीदेवी - भूदेवी के साथ नित्यकल्याणोत्सव, इतर उत्सव एवं ब्रह्मोत्सव समर्पित किये जा रहे हैं।

चौदहवीं शताब्दी तक ब्रह्मोत्सव (पेरटासी और मार्गलि मास में) दो बार मनाये जा रहे थे। सन् 1300 में, तिरु वेङ्कटनाथ यादवराय सिंगना के शासन काल में उस राजा के सेनापति ने आडि (आषाढ़ का) पर्व को राचय दण्ड़नायका के नाम से मनाया। इसके लिए उसने सन् 13.1.1388 को पोंगलूरु ग्राम को बिना भाड़े के, पूरी जगह मुफ्त में दे दिया (अभिलेख 1-99, ति.ति.दे. अभिलेख)। विजयनगर के राजा हरिहररायलु - 2 ने मासी (माघ) पर्व के लिए पूंगोडु ग्राम को दान में दिया। उस अभिलेख में यह कहा गया है कि ब्रह्मोत्सव मनाने के लिए उस ग्राम की आमदनी को जमाकर रखने का दायित्व मुल्लै वेङ्कट जीयर को सौंपा जाय (अभिलेख-1-185)। 5-12-1429, को देवरायलु - 2 ने तीन गाँव, 2200 मुद्रायें उत्सव मनाने एवं भगवन को नैवेद्य चढ़ाने के लिए दान दिया। तब आश्वीयुज (अल्पिसि) में उत्सव मनाया गया था जब चंद्रमा पुनर्वसु में प्रविष्ट होकर स्वाति को बाहर निकला था (यानी नौ दिवसों का समय)। अंतिम दिन को तीर्थवारि या चक्र स्नान के साथ उत्सव संपन्न हुआ (अभिलेख-192)। पंद्रहवीं शताब्दी में सात ब्रह्मोत्सव मनाये जा रहे थे। वे इस प्रकार थे - चित्रि, आडि, आवणि, पेरटाशि, अल्पिशि, मासी और पण्गुणि। ब्रह्मोत्सवों में, तीर्थवारि (चक्रस्नान) के दिन स्वामी को समर्पित किये जाने वाले नैवेद्य को अनंतरायन नामक एक भक्त ने आयोजित किया था (अभिलेख 1-213, दिनांकः 15.12.1445)। श्रीवैष्णव का संप्रदाय, द्रविड भूमि से आंध्रभूमि तक विस्तार पायी । इसलिए तिरुमल के वैष्णव मंदिरों में आज भी कुछेक उत्सव द्रविड़ संप्रदाय एवं

सौरमान के आधार पर मनाये जाते हैं। कुछ नित्योत्सव तो आंध्रों के संप्रदाय व चांद्रमान के आधार पर मनाये जा रहे हैं।

ताल्लपाक पेदतिरुमलाचार्य (अन्नमाचार्य के पुत्र) ने दो हजार वरहा को वेङ्कटेश्वर स्वामी के कोषागार में जमा किया और अपने नाम से, आनि के मास में तेरह दिवसों का ब्रह्मोत्सव (प्रमुख उत्सव ग्यारह दिनों का) व्यवस्थित किया (भेंट विवरण 4 - 129, दिनांकः 7-3-1539)। यह ब्रह्मोत्सव ज्येष्ठ मास (आनि मास) में श्रवणा नक्षत्र के लगने पर प्रारंभ होकर मृगशिरा नक्षत्र के लगने पर (तिरुमलाचार्य का जन्म नक्षत्र) चक्रस्नान के साथ समाप्त होता है। विजयनगर साम्राज्य के राजा सदाशिव के शासन काल में वेङ्कटाद्रि नामक एक भक्त ने ब्रह्मोत्सव के दस दिनों में कोलुवु श्रीनिवास मूर्ति (अलगप्पिरानार) को नैवेद्य चढ़ाने के लिए योजनाएँ बनाई। देसूर, वेलंजिनाडु, तिम्मसमुद्रम नामक ग्रामों से आमदनी में जो, क्रमशः 700, 200 तथा 130 रेखै पोन्नु मिलते हैं, जो कुल 1,030 रेखै पोन्नु बनते हैं, वे 21/2 ग्रामों से मिलते थे, इनका उपयोग नैवेद्य के लिए करवाने की व्यवस्था की।

इसे अमल में ले आने का अभिलेख (5-129) 8.7.1551 को बनाया गया था। इस संदर्भ में, उन्होंने ब्रह्मोत्सव व उनके व्यवस्थापकों का नाम एवं विवरण निम्नलिखित रूप से लिखवाया, यथा -

क्रमांक	दाता	उत्सव का नाम
1.	तिरुनिन्र उरुडैयार्लु (तिरुमल के अधिकारी)	आवणि ब्रह्मोत्सव
2.	काडवन पेरुनदेवी, शक्ति विकटन की पट्टरानी (ब्रह्मदेव के नाम पर)	पेरटाशि ब्रह्मोत्सव
3.	देवराय महारायलु	अल्पिशि ब्रह्मोत्सव

4.	बुक्कराय महारायलु	कार्तिकि ब्रह्मोत्सव
5.	कृष्णदेव महारायलु (अपने माता-पिता के नाम पर)	तै ब्रह्मोत्सव
6.	हरिहरराय महारायलु	मासि ब्रह्मोत्सव
7.	वीरनरसिंग यादवरायलु	पंगुणि ब्रह्मोत्सव
8.	मेलुडयार (मंदिर का अधिकारी)	चित्तिरि ब्रह्मोत्सव
9.	ताल्लपाक तिरुमलाचार्य	आनि ब्रह्मोत्सव
10.	रामराज चिन्न तिम्मराजु	आनि ब्रह्मोत्सव

इस प्रकार सोलहवीं शताब्दी में, नौ महीनों की समयावधि में, 9,11,13, दिनों के दस ब्रह्मोत्सव 'श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी' के सम्मान में मनाये जा रहे थे। इन सभी की योजनाएँ भाड़ामुक्त खेतों या मंदिर के खेतों की आमदनी पर आधारित थी। वैसे भी ताल्लपाक पेद तिरुमलाचार्य ने आनि ब्रह्मोत्सव के हेतु दो हजार वरहा को वेङ्कटेश्वर स्वामी के खजाने में जमा किया था। सभी दाताओं ने अभिलेखों के समापन भाग में ऐसा लिखवाया कि उनकी दानशीलता सुरक्षित रखी जाये, एवं अविच्छिन्न रूप से चालू भी रखें।

''दानपलनयो र्मध्ये दानात श्रेयोनुपालनम्
दानात् स्वर्ग मवाप्नोति पालना दच्युतम् पदम् ।।
स्वदत्तात् द्विगुणं पुण्यं परदत्तानुपालनम्
परदत्तापहारेण स्वदत्तं निष्फलम् भवेत् ।।''

''दानशीलता एवं प्रशासन में भेद होता है। अपने दान की सुरक्षा से ज्यादा दूसरों के दान को सुरक्षित रखना श्रेयस्कर कृत्य होता है। जो अपने दान को सुरक्षित रखता है, उसे स्वर्ग (स्वर्ग सुख) मिलता है। अगर दूसरों के दान की व्यक्ति रक्षा करता है, तो उसे मुक्ति (जन्म-मृत्यु वलय से मुक्ति) मिलती है। अपने दान से मिलने वाले स्वामी के आशीर्वचन दोगुना रूप में तब मिलता है जब हम दूसरों के दान को सुरक्षित रखते हैं। दूसरों के दान की चोरी करने पर अपना दान बेकार जाता है'', इस अभिलेख को उन्होंने अवश्य ही लिखवाया था, लेकिन उनकी दानशीलता को सुरक्षित रखने में कोई पुण्यात्मा दृष्टिगोचर नहीं होता।

अट्ठारहवीं शती तक आते-आते, दान में आयी सभी भूमि इतर धर्म प्रचारकों व विदेशी शासकों के अधीन हो गई थी। आमदनी व स्थिर संपत्ति की हानि के परिणामस्वरूप दाताओं के द्वारा दिये गये दान एवं कल्याणकारी मापन निलंबित हुए। दाताओं के द्वारा आयोजित उत्सव स्थगित हुए। इतना ही नहीं, जितने भक्तों ने अपने जन्म नक्षत्र के दिन पर चक्रस्नान को व्यवस्थित करके उसके पहले के नौ दिनों में ब्रह्मोत्सव का आयोजन किया (भेंट विवरण 1-92, दिनांकः 5.12.1429 एवं ताल्लपाक पेद तिरुमलाचार्य - 4 - 129, दिनांकः 7.3.1539) वे सभी पवित्र कैंकर्य दानशीलकृत्य दाताओं के देहावसान के बाद रुक ही गये। लेकिन लोक कल्याण के लिए ब्रह्म द्वारा आयोजित नौ दिनों का ब्रह्मोत्सव जो कन्या मास के श्रवणा नक्षत्र के दिन चक्रस्नान से परिसमाप्त होता है, वे आज भी मनाये जा रहे हैं, जो श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की कीर्ति को उत्तेजित कर, विश्व के हर कोने तक पहुँचाये जा रहे हैं। ये दस दिनों का पर्व है जो अंकुरार्पण, ध्वाजारोहण पर प्रारंभ होकर चक्रस्नान तथा ध्वजावरोहण से समाप्त होता है। शिलाशासनों में इन्हीं को तमिल भाषा में 'तिरुक्कोडि तिरुनाल' के रूप में लिखवाया गया है।

आजकल, तिरुमल में कन्यामास का नौ दिवसीय वार्षिक ब्रह्मोत्सव मनाये जा रहे हैं। जब कभी चंद्रमान के अनुसार अधिकमास का आगमन होता है, तब तिरुमल में दो ब्रह्मोत्सव मनाये जाते हैं।

अधिक मास

कन्यामास में श्रवणा नक्षत्र (श्रीवेङ्कटेश्वर का अवतार नक्षत्र) के दिन अवभृथ (चक्रस्नान) को स्थापित कर, उसके पहले के नौ दिनों में ब्रह्मोत्सव को मनाना संप्रदाय है। कन्यामास, सौरमान की गिनती से आता है। चांद्रमान के अनुसार, कन्यामास का श्रवणा नक्षत्र सामान्यतया आश्वीयुज के मास में लगता है। सौरमान के अनुसार, एक वर्ष में 365 दिन होते हैं। इसमें अधिकमास नहीं होते। चांद्रमान के अनुसार एक वर्ष में 354 दिन ही होते हैं। इसलिए इसमें अधिकमास होते हैं। चांद्रमान की गिनती में ग्यारह दिन कम होने के कारण कभी चांद्रमान में सूर्य संक्रांति रहित मास आता है। इसी को अधिकमास कहते हैं (सूर्य संक्रमण रहित चांद्रमान)। सामान्यतया तीन वर्षों में एक बार अधिकमास आता है। अधिकमास जिस वर्ष में नहीं होता, तब कन्याश्रवण चांद्रमान आश्वीयुज में ही लगता है। तब आश्वीयुज मास के विदिया से लेकर विजयदशमी तक ब्रह्मोत्सव मनाये जाते हैं। जिस वर्ष में अधिकमास आता है, तब कन्या श्रवण चांद्रमान के भाद्रपद मास में ही आता है। इसलिए भाद्रपद मास में मनाये जानेवाले ब्रह्मोत्सव ही प्रमुख वार्षिक ब्रह्मोत्सव हैं। उस वर्ष को आश्वीयुज के महीने में दूसरा ब्रह्मोत्सव मनाया जाता है। इस ब्रह्मोत्सव को 'नवरात्रि ब्रह्मोत्सव' कहते हैं। इनमें कन्या भाद्रपद में मनानेवाले वार्षिक ब्रह्मोत्सव प्रधान हैं। इसलिए, यह ब्रह्मोत्सव ध्वजारोहण से प्रारंभ होकर ध्वजावरोहण से समाप्त होता है। वाहन सेवायें यथातत् चलाये जाते हैं। नवरात्रि के ब्रह्मोत्सव में ध्वजारोहण एवं ध्वजावरोहण

नहीं होते। इस ब्रह्मोत्सव में अष्टदिक्पालक और देवताओं का आमंत्रण नहीं होता। वाहन सेवायें प्रथम ब्रह्मोत्सव की भांति यथाक्रम चलाये जाते हैं। रथोत्सव के लिए लकड़ी से बने रथ का उपयोग करते हैं। दूसरे ब्रह्मोत्सव में चाँदी के रथ का उपयोग करते हैं। आजकल रजत रथ के स्थान पर स्वर्ण रथ का उपयोग किया जा रहा है। रजत रथ कहाँ है, उसका क्या हाल है, इसका कोई पता नहीं चल रहा है। संभव है कि वह तिरुमल की प्रदर्शिनी में रखा हुआ हो। प्रथम ब्रह्मोत्सव में, रात्रि में संपन्न होनेवाले वाहनोत्सव के उपरांत तिरुमलराय मण्ड़प में प्रतिदिन उत्सव मूर्तियों को स्वर्ण तिरुच्चि (पालकी) पर आस्थानम् (सभा) होता है। दोबारा नवरात्रि ब्रह्मोत्सव में रात्रि में संपन्न वाहन सेवा के बाद हर दिन रंगनायक मण्डप में स्वर्ण शेषवाहन पर उत्सव मूर्तियों की सभा कराई जाती है।

कोइल आलवार तिरुमंजनम् (मंदिर की शुद्धि)

ब्रह्मोत्सव के प्रारंभ से पूर्व श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के मंदिर की शुद्धि (सफ़ाई) की जाती है। इस कार्यक्रम को 'कोइल आलवार तिरुमंजनम्' के नाम से बड़े वैभव के साथ करते हैं। कोइल का अर्थ - मंदिर है, आलवार का अर्थ भक्त है। जिस भाँति भक्त के हृदय में भगवान वास करता है, उसी भाँति गर्भगृह में देवता का वास होता है और इसीलिए मंदिर को भी भक्त के समतुल्य गौरव प्राप्त हो रहा है।

इस प्रकार भक्त एवं मंदिर में अभेद का भाव स्थापित किया गया है। कोइल के समकक्षी भक्त का जो तिरुमंजन होता है, वह मंगल स्नान है। तिरुमल में वार्षिक ब्रह्मोत्सव के प्रारंभ से पूर्व आनेवाले मंगलवार के दिन को कोइल आलवार तिरुमंजनम् किया जाता है। यह सफ़ाई का कार्यक्रम होता है। यह अकेले ब्रह्मोत्सव के समय ही नहीं बल्कि उगादि

(तेलुगु भाषियों की वार्षिकी), आनिवारि आस्थानम्, वैकुंठ एकादशी से पूर्व भी यानी इसे वर्ष में चार बार किया जाता है। गर्भालय के चार दीवारों, छप्पर पर लगी धूल-दूसर, मकड़ीजल, कपूर की कालिख का अपघर्षण करना, पोंछना, और उसके बाद रीटा पानी से शुद्ध करना ही तिरुमंजनम् है। इसके बाद सुंगधित पदार्थों से बने लेई का दीवारों, ऊपर के छप्पर पर पोतते हैं। यह शुद्धि कार्यक्रम, आलय के हर भाग में किया जाता है। जिस दिन को कोइल आलवार तिरुमंजनम् किया जाता है, उस दिन को हर दिन की भाँति सुप्रभात, तोमाल सेवा, कोलुवु (सभा), अर्चना, प्रथम घण्टी, नैवेद्य, शात्तुमोर आदि यथातत् किया जाता है। इसके बाद, आनंद निलयस्वामी के मूलविराट पर शिखा से चरण तक एक विशेष वस्त्र पहनाया जाता है जो स्वामी की मूर्ति पर धूल-दूसर, पानी के बूँदों के लगने से बचाता है। इस वस्त्र को 'मलैगुडारम्' कहते हैं। मूलविराट के साथ रजत भोग श्रीनिवास मूर्ति की मूर्तियाँ भी 'मलैगुडारम्' के अंदर ही रहते हैं। इतर उत्सव मूर्तियों, शालग्राम आदि को सुवर्ण चौखट (बंगारु वाकिलि) के सामने के घण्टामण्टप में पहुँचाकर, वहाँ उनका तिरुमंजनम् एकांत में किया जाता है। पंचपात्र (प्रधान बर्तन), दीपदान, तीर्थ के लोटे आदि पूजा बर्तन को बंगारुबावि के पास ले जाकर, उनको मांझकर, साफ़ किया जाता है। इनके साथ-साथ मंदिर के अन्य चौखट, वाहन आदि को भी साफ़ करते हैं। आनंदनिलय की शुद्धि की भाँति विमान प्रदक्षिणा में स्थित परिवार देवता के मंदिरों की शुद्धि भी करते हैं।

आलय के दीवार, तथा छप्पर को साफ़ करने के उपरांत सुगंध द्रव्यों से बने 'परिमलम्' नामक लेप को दीवारों एवं छप्पर पर पोतते हैं। गर्भगृह के छप्पर पर 'कुरालम्' नामक रेशमी वस्त्र डालते हैं। उसके बाद पानी से पूरा जमीन साफ़ करते हैं। तदुपरांत उत्सव मूर्तियों, पंचपात्र

आदि को अपनी जगह पहुँचा देते हैं। चौखट पर टंगे पुराने पर्दों को निकालकर नवीन पर्दों को टंगाते हैं। बाद में गर्भगृह के मूलविराट पर पहनाये गये 'मलैगुडारम्' को निकाल देते हैं। दीपाराधना करके, सभी मूर्तियों को लघु उपचार समर्पित करके कर्पूर आरती को उतारते समय, आनंद-निलय का पर्दा हटाते हैं। उस समय जितने भक्त वहाँ उपस्थित रहते हैं, वे श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का दर्शन करके, आरती स्वीकारने वाले धन्य जीवी बनते हैं। इसके साथ कोइल आलवार तिरुमंजनम् समाप्त होता है। अब श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी, उत्सव मूर्तियाँ, सभी वाहन, अर्चकस्वामी, कर्मचारी, भक्तगण आदि सभी ब्रह्मोत्सव मनाने के लिए सन्नद्ध हो जाते हैं। स्वामी के मंदिर को विद्युत दीपों के साथ साथ, रंगीन फूल मालाओं के तोरणों से, केले के स्तम्भों से, आम के पत्तों के तोरणों से सुआलंकृत करते हैं। यह दृश्य दृगपर्व प्रदान करता है। उसके बाद अंकुरार्पण का कार्यक्रम चलाया जाता है।

ध्वजारोहण के पूर्व दिन को, संध्या समय में भगवान के सेनाधिपति विश्वक्सेन, मंदिर की नैरुति कोने में स्थित वसंत मण्डप में आलयमर्यादा, के साथ श्वेतछत्रचामर, मंगलवाद्यों के साथ शोभायात्रा के लिए निकलते हैं। वेद पंडितों और अर्चकस्वामी जब मंत्रोच्चारण कर रहे होते हैं, तब भूमिपूजा और मृत्तिसंग्रहण करके वे प्रदक्षिणा पथ से होते हुए आलय प्रवेश करते हैं। विश्वक्सेन, तिरुमाड़ वीथियों में यात्रा करते हुए, उत्सव की तैयारियों का पर्यवेक्षण करते चलते हैं। इस भव्य दृश्य को ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने निम्नलिखित रूप में वर्ण चित्र खींचकर इस रूप में प्रस्तुत किया -

अदे वच्चे निदि वच्चे नच्युत सेनापति
पदि दिक्कुलकु निट्टे पाररो यसुरुलु

यहाँ आया वहाँ आया अच्युत का सेनापति
हे असुर! तुम सभी तितर बितर होइए दसों दिशाओं में **-2 - 79**

अन्नमाचार्य ने वर्णन किया कि विष्णु के सेनापति के आगमन से राक्षस सभी नौ-दो-ग्यारह हो गए। उसी रात को यागशाला में नवीन मृत्ति के बर्तनों में नवधान्यों एवं मृत्ति को ड़ालकर मंत्रोच्चारण के साथ हस्ता नक्षत्र युक्त शुभ समय पर अंकुरार्पण कार्यक्रम चलाते हैं।

अगले दिन कन्यामास में चित्ता नक्षत्र के लगने पर वैखानस आगम शास्त्र के अनुसार आलय के प्रांगण में गरुड़ध्वज को फहराकर कंकण धारण का कार्यक्रम किया जाता है। मंदिर के बाहर आठों दिशाओं में बलि अन्न को रखते हुए मलयप्प स्वामी दोनों देवेरियों एवं परिवार देवताओं के साथ शोभायात्रा में जाते रहते हैं, तब अष्टदिक्पालकों का आमंत्रण किया जाता है। समस्त देवतागण को ब्रह्मोत्सव में निमंत्रण देने के बाद मलयप्प स्वामी मंदिर में प्रवेश करते हैं। तदुपरांत जब श्रीहरि ध्वजस्तंभ मण्डप में ठहरते हैं, तब उनकी अनुमति लेकर अर्चकस्वामी 'ओम् तत्पुरुषाय विद्महे, स्वर्ण पक्षाय धीमहि, तन्नो गरुड़ः प्रचोदयात्त्' इस गरुडगायत्री मंत्र का पठन करते हुए, स्वर्ण ध्वजस्तम्भ पर गरुड़ध्वज को फ़हराते हैं। ध्वजारोहण का यह कार्यक्रम बड़े वैभव के साथ मनाया जाता है। इस उत्सव में 'मुद्गलान्नं' (मूँगदाल चावल) को नैवेद्य के रूप में चढ़ाया जाता है। जनश्रुति एवं स्त्रियों का विश्वास है कि बंजर स्त्रियाँ जब इस प्रसाद को स्वीकारती हैं, तो संतानवती बन जाती हैं। ध्वजारोहण के उपरांत तिरुमलराय मण्ड़प में (जो ध्वस्तम्भ की दक्षिण दिशा में है) सर्वाभरण युक्त श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी को तिरुच्चि में स्थापित करके आस्थानम् (सभा) किया जाता है।

तिरुमल में ध्वजारोहण आजकल संध्या के समय किया जा रहा है। इससे पूर्व, यह उत्सव, दिन के समय ही सुमूहर्त काल में मनाया जाता था। सामान्यतया ध्वज को दिन में ही फ़हराया जाता है और उसका अवरोहण संध्या के समय किया जाता है। इसका पुराना संप्रदाय भी रहा है। तिरुमल में ध्वजारोहण किसके द्वारा, किसकी सुविधा के लिए, क्यों संध्या के समय किया जा रहा है, इसकी कोई सूचना, समाचार नहीं है, यह स्वामी को ही पता चलता होगा। वैखानस आगम का पालन करनेवाले अन्य मंदिरों में ध्वजारोहण का उत्सव दिन के समय ही होता है। तिरुचानूर श्रीपद्मावती देवी के मंदिर में ध्वजारोहण का उत्सव, दिन के समय ही मनाया जाता है। ब्रह्म द्वारा प्रारंभित ब्रह्मोत्सव का वर्णन, ब्रह्मपुराण में ऐसा किया गया है -

''अंकुरार्पण मातेनुः सहर्ष पुलकांकुराः
ततोऽपरेद्युषसि ध्वजारोह महोत्सवम् ।।
आरभ्यावभृथांतम् च पुष्पयागांत मेव च
उत्सवम् श्रीनिवासस्य चकार विधिवद्विधिः ।। 14 - 43, 44

ब्रह्मादि देवता, महर्षियों, विश्वक्सेन आदि ने संतोषातिरेक में रोमांचित होकर अंकुरार्पण उत्सव को मनाया। अगले दिन प्रातःकाल में ध्वजारोहण से लेकर अवभृथ स्नान (चक्र स्नान) तथा पुष्प याग तक यथाक्रम से ब्रह्म ने ब्रह्मोत्सव को मनाया। ब्रह्म के द्वारा मनाये गये छठवें दिन सायं का उद्यान विहारोत्सव, चक्रस्नान के अगले दिन का पुष्पयाग महोत्सव आज आचरण में नहीं है।

ब्रह्मोत्सव के प्रारंभ के दृश्य को, तरिगोंड वेंगमांबा ने अपनी रचना 'वेङ्कटाचल माहात्म्य' में निम्नलिखित रूप से वर्णन किया -

‘हस्तयंदंकुरार्पणम्बुनु, नैवेद्यादि कृत्यम्बुलु नेरवेर्चि, यम्मरुनाडुदयम्बुन बुण्याह वचन, वास्तुहोम, गरुड़ प्रतिष्ठा, गरुड होम, भेरी तालताडन, कंकण धारण, अर्चना, बहुमानादि कृत्यम्बु लोनरिंचि (2-124) ।

हस्ता नक्षत्र में अंकुरार्पण, नैवेद्य आदि समर्पित कर
अगले दिन प्रातःको पुण्याहवाचन, वास्तुहोम कर, गरूड़ प्रतिष्ठा
गरूड होम, ढोल बजाना, कंकण धारण, अर्चना कर
भेंट समर्पण आदि कार्यों को संपन्न कर

तरिगोंड वेंगमांबा के समय (ई.के 1730-1817) - ई.के 19वीं शती के प्रारंभ में भी हस्ता नक्षत्र के दिन अंकुरार्पण, अगले दिन सुबह चित्ता नक्षत्र को ध्वजारोहण करने के साथ ब्रह्मोत्सव प्रारंभित हो जाते थे। अन्यत्र भी वेंगमांबा ने ‘चित्तनु ध्वजारोहण मोनरिंचि’ (चित्ता नक्षत्र को ध्वजारोहण करके) (2-126) कहकर ब्रह्मोत्सव का वर्णन किया।

ध्वजारोहण जिस दिन को होता है, उस रात से श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी यानी उत्सव मूर्ति मलयप्प स्वामी, अपनी दोनों देवेरियों-श्रीदेवी-भूदेवी समेत होकर, अन्यान्य वाहनों पर आरुढ़ होकर हर दिन सुबह और रात्रि को वैभवपूर्ण ढंग से शोभायात्रा के लिए निकलता है। यह उत्सव नौ दिनों तक चलता है।

अशौच या अन्य किन्हीं कारणों से भगवान का दर्शन नहीं कर पानेवाले भक्तों के लिये आगम शास्त्रों ने वाहन सेवाओं एवं उनके द्वारा मूर्तियों का दर्शन करने का सौभाग्य प्रदान किया। वाहन सेवाएँ, भक्तों को आध्यात्मिक संदेश देती हैं। इनसे तत्वोपदेश के साथ-साथ आनंद भी प्राप्त होता है।

	वाहनोत्सव का क्रम	
दिवस	**दिन का उत्सव**	**रात्रि का उत्सव**
0	बंगारु तिरुच्चि (स्वर्ण पालकी) संध्या समय	अंकुरार्पण
1.	ध्वजारोहण (संध्या समय)	महाशेषवाहन
2.	लघुशेषवाहन	हंसवाहन
3.	सिंहवाहन	मोतीवितानवाहन
4.	कल्पवृक्षवाहन	सर्वभूपालवाहन
5.	पालकी, मोहिनी अवतारोत्सव	गरुड़वाहन (गरुड़ सेवा)
6	हनुमंतवाहन वसंतोत्सव (संध्या समय) सुवर्ण रथरंग ड़ोलोत्सव	गजवाहन
7.	सूर्यप्रभावाहन	चंद्रप्रभावाहन
8	रथोत्सव	अश्ववाहन
9	पालकी उत्सव तीर्थवारि, चक्रस्नान	बंगारु तिरुच्चि (स्वर्ण पालकी) ध्वजावरोहण

ब्रह्मोत्सव के दौरान जो वाहन सेवायें की जाती हैं, उनमें श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्री मलयप्प स्वामी, 1. महाशेषवाहन, 2. मोती वितान पालकी, 3. कल्पवृक्षवाहन, 4. सर्वभूपालवाहन, 5. सुवर्णरथ, 6. रथोत्सव, 7. स्वर्ण पालकी (बंगारु तिरुच्चि) में आरुढ़ होकर तिरुमल की माड़वीथियों में शोभायात्रा के लिए निकलता है।

कुछेक वाहन जैसे 1. लघुशेषवाहन, 2. हंसवाहन, 3. सिंहवाहन, 4. मोहिनी अवतार पालकी, 5. गरुड़वाहन, 6. हनुमंतवाहन, 7. गजवाहन, 8. सूर्यप्रभावाहन, 9. चंद्रप्रभावाहन, 10. अश्ववाहन में अकेले मलयप्प स्वामी आरुढ़ होकर तिरुवीथियों में शोभायात्रा के लिए निकलता है।

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के उत्सव वैभव का वर्णन ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने इस रूप में प्रस्तुत किया -

''तिरुवीधुल मेरसी देवदेवुडु
गरिमल मिंचिन सिंगारमुल तोडनु ॥ तिरु ॥
तिरुदंड़ेलपै नेगी देवुडिदे तोलिनाडु
सिरुल रेण्डव नाडु शेषुनि मीद
मुरिपेन मूडो नाडु मुत्याल पंदिरि क्रिन्द
पोरि नालुगो नाडु पुव्वुगोविल लोनु ॥ तिरु ॥

गक्कुन नइदव नाडु गरुडुनि मीदनु
येक्केनु आरव नाडु येनुगु मीद
चोक्कमै येड़व नाडु सूर्यप्रभ लोननु
इक्कुव देरुनु गुर्र मेनिमिदो नाडु ॥ तिरु ॥

कनक पुटंदलमु कदिसि तोम्मिदो नाडु
पेनचि पदो नाडु पेण्ड्लि पीट

येनसि श्रीवेङ्कटेशु डिन्ति यलमेल्मंगतो
वनितल नडुमनु वाहनाल मीदनु ॥ तिरु ॥

- अन्नमय्य संकीर्तन, सं. 13-192

इस संकीर्तन के द्वारा अन्नमय्य ने वाहन सेवाओं के वैभव का अत्यंत मनोहर शब्दचित्र खींचा है। दसवें दिन का कल्याणोत्सव जिसका वर्णन अन्नमय्य ने किया, वह उत्सव आजकल मनाया नहीं जा रहा है। इतने सारे वाहनों पर आरुढ़ होनेवाले श्रीवेङ्कटेश्वर इसीलिए भक्तों का इष्टदैव बना। वेङ्कटेश्वर स्वामी के शक्ति-सामर्थ्य से आश्चर्यचकित होकर अन्नमय्य ने भगवान की स्तुति इस प्रकार की -

'एट्टु नेरिचिति वय्य इन्नि वाहनमु लेक्क
गट्टिगा निंदुके हरि कडुमेच्चे मय्य!'

'इतने वाहनों पर आरुढ़ होना कैसे ही सीखा तुमने
इसलिए हरि तेरी प्रगाढ़ कीर्ति हम करते हैं'

ब्रह्मोत्सव के समय, तिरुमल आनेवाले भक्तों के बारे में अन्नमाचार्य ने ऐसा वर्णन किया -

नाना दिक्कुल नरूलेल्ल
वानललोने वत्तुरू गदलि ॥ पल्लवि ॥

सतुलु सुतुलु बरिसरूलु बांधवुलु
हितुलु गोलुवगा निन्दरूनु
शत सहस्र योजन वासुलुनु
व्रतमुलु तोडने वत्तुरू गदलि ॥ नाना ॥

मुडुपुलु जालेलु मोगिदलमूटलु
कडलेनि धनमु गांतलुनु

कडु मंचि मणुलु करूलु तुरगमुलु
वडि गोनि चेलगुचु वत्तुरू गदलि ।। नाना ।।

मकुटि वर्धनुलु मण्ड़लेश्वरूलु
जगदेक पतुलु जतुरूलुनु
तगु वेङ्कटपति दरूशिम्पग बहु
वगल संपदल वत्तुरू गदलि ।। नाना ।। - 11 - 134

समस्त दिशाओं के भक्त सभी
वर्षा में ही आते हैं चलकर ।। टेक ।।

सतियाँ, सुत, परिसरवाले, बंधुजन
हितैषी वंदना करते
शतसहस्त्र योजन दूर स्थित भक्तगण
व्रतधर बनकर आते चलकर ।। नाना ।।

मनौतियाँ,
अनगिनत धनराशि और कांता सहित
अनमोल मणियों, हाथी, घोड़े संग
सभी आते हैं चलकर ।। नाना ।।

मुकुटधारी - मण्डलेश्वर
जगत्पति तथा चतुर सभी
इष्टदैव वेङ्कटपति के दर्शनार्थ
संपदा साथ ले आते चलकर ।। नाना ।। - 11 - 134

उपर्युक्त पंक्तियों में 'वानललोने वत्तुरु गदलि' - इन शब्दों से यह बोध होता है कि अधिक मास जब होता है, तब ब्रह्मोत्सव भाद्रपद मास

(पेरटासी) यानी वर्षऋतु के समय मनाया जाता था। अन्नमय्य ने जिन वाहनों यथा - तिरुदण्डेलु, पुव्वुगोविल, कनकपुटंदलमु का वर्णन किया, वे सभी आजकल क्रम से मनुष्यांदोलिका, कल्पवृक्ष एवं पालकी सेवा के रूप में बुलाये एवं मनाये जा रहे हैं।

1. महाशेषवाहन

ब्रह्मोत्सव में श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी जितने वाहनों पर शोभा यात्रा के लिए निकलते हैं, उन सबका अपना-अपना ऐतिहासिक महत्व है। श्रीहरि अन्यान्य वाहनों पर आरुढ़ होकर शोभायात्रा के द्वारा भक्तजनों को हरेक वाहन के महत्व का शोभायात्रा द्वारा संदेश देता रहता है। ध्वजारोहण की रात को श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी का (श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की उत्सव मूर्ति) महाशेषवाहन उत्सव मनाया जाता है। ''बहुवन पादपाब्धि कुलपर्वत पूर्ण सरस्वती सहित महामहीभर मजस्त्र सहस्त्रफणालि दाल्यि दुस्सहतर मूर्तिकिन् जलधिशाइकि''- श्रीमन्नारायण स्वामी की शैय्या बननेवाले (अनेक जंगलों से, वृक्षों से, समुद्रों से, बडे पर्वतों से, जल से भरे जलकुड़ों, नदियों से भरी पृथ्वी के भार को निरंतर अपने सहस्त्र फ़ण पर ढोते हुए क्षीर सागर में शयनित श्रीमन्नारायण के लिए निरंतर शैय्या बननेवाले सर्पकुल के अधिपति, विषैले साँपों को नाश करनेवाले आदिशेष) श्रीमन्नारायण की अर्चामूर्ति श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी (श्रीनिवास) के ब्रह्मोत्सव के प्रारंभ में पहले दिवस की संध्या समय में महाशेषवाहन पर शोभायात्रा के लिए निकलते हैं। विशिष्टाद्वैत संप्रदाय के अनुसार भगवान शेषि है, अन्य सभी शेषभूत हैं। शेषवाहन पर यात्रा के लिए निकलनेवाले स्वामी, शेष-शेषि भाव का बोध भक्तों को कराता है।

2. लघुशेषवाहन

शेषाद्रि मलैवासी श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी, ब्रह्मोत्सव के दूसरे दिन सुबह को पंचफ़ण वाले लघुशेषवाहन पर शोभायात्रा के लिए अकेले ही निकलते हैं। शेष नाग, नारायण का अंश माना जाता है। वह, विष्णु भगवान का अपर देही है।

श्लोक ।। निवास शैय्यासन पादुकांशुको
प्रधान वर्षातप वारणादिभिः ।
शरीर भेदैस्तव शेषतांगतैः
यथोचितम् शेष इतीर्यते जनैः ।।

आदिशेष, श्रीनिवास का आवास, शैय्या, आसन, पादुक, अंगवस्त्र, शिरोधान, गर्मी-वर्षा से रक्षा करनेवाला छत्र, पादपीठ, सेवक, आदि के साथ-साथ शरीरभेद धारक के रूप में विष्णु भगवान का शेषत्व अंश बनता है। 'शेष' नाम से लोग इनका यशोगान करते हैं। इस पृथ्वी पर श्रीमहाविष्णु भगवान को अवतार ग्रहण करने के लिए आदिशेष ने योग्य प्रदेश बनाते हुए पर्वत का रूप धारण किया। नारायण, शेषाद्रि पर अवतरित हुए। स्वामी और शेष के बीच का संबंध इस प्रकार अभिन्न बनता है। इसीलिए ब्रह्मोत्सव में दूसरी बार भी शेष, स्वामी का वाहन बना। इस वाहन पर 'मुरली मनोहर' के रूप में भक्तों को दृगपर्व प्रदान करता है स्वामी। तरिगोंड वेंगमांबा ने ब्रह्मोत्सव के दौरान ध्वजारोहण की रात्रि को शोभायात्रा में निकलनेवाली शेषवाहन की विशिष्टता का वर्णन इस प्रकार किया -

'अलघु शेषवाहनोत्सवंबुनु मरुनाडुदयंबु नंदु लघु शेषवाहनोत्सवम्बुनु' (2-128) यानी, पहले दिन को महाशेषवाहन और दूसरे दिन सुबह को लघुशेषवाहन होगा। सन् 1830 को एक विदेशी यात्री ने लघुशेषवाहन का दर्शन करके उसे 'बालशेषवाहन' नाम दिया। इस पर एक निबंध भी 'एशियाटिक जर्नल, मई-अगस्त अंक, 1831 को कोलकत्ता से प्रकाशित हुआ।

ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने ब्रह्मोत्सव के शेषवाहन का वैभव निम्नलिखित रूप से प्रस्तुत किया -

वीडु गदे शेषुडु श्रीवेङ्कटाद्रि शेषुडु
वेडुक गरुडुनितो बेन्नुद्दैन शेषुडु ।। वीडु ।।

वेड़ पडगल तोड वेलसिन शेषुडु
चायमेनि तलुकु वज्राल शेषुडु
मायनि शिरसुलपै माणिक्याल शेषुडु
येयेड़ हरिकि नीडै येगेटि शेषुडु ।। वीडु ।।

पट्टपु वाहनमैन बंगारु शेषुडु
चुट्टु चुट्टु कोनिन मिंचुल शेषुडु
नट्टु कोन्न रेंडुवेलु नालुकल शेषुडु
नेट्टिन वारि बोगड नेरुपरि शेषुडु ।। वीडु ।।

कदसि पनुल केल्ल गाचुकुन्न शेषुडु
मोदल देवतलेल्ला मोक्के शेषुडु
अदे श्रीवेङ्कटपति कलुमेलु मंगकुनु
वदरक ये पोद्दु पानुपैन शेषुडु ।। वीडु ।। - 9 - 76

यही है शेष, श्रीवेङ्कटाद्रि का शेष
विलासी गरुड़ संग सन्नद्ध हुआ शेष ।।यही है।।

सहस्र फ़णों के साथ उद्भूत हुआ यह शेष
अनमोल वज्रों की सायावाला यह शेष है
अमल शिरों पर माणिक्य युक्त शेष है
हरि की छाया बनकर हर स्थान घूमता है शेष ।। यही ।।

राजसी वाहन बनता स्वर्ण शेष है यह
शरीर के वृत्ताकार को बढ़ानेवाला शेष
दो सहस्र जिह्वाओं का सहस्रफ़णी शेष है ।। यही ।।

आज्ञा के इंतजार में कार्यदक्ष बनकर रहता शेष
सभी देवता पहले शेष को नमन करते हैं
उसी वेङ्कटपति - अलमेलुमंगा के लिए
शैय्या बनता है शेष सदा ।। यही।। -9 - 76

3. हंसवाहन

द्वितीय दिवस के रात को स्वर्ण हंसवाहन पर श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी अकेले ही वीणापाणी सरस्वती माता के रूप में भक्तजनों को दर्शन प्रदान करते हुए माड़वीथियों में यात्रा के लिए निकलता है। 'गुंभनमुन दुग्धजीवन विभाग विधान निरुढ़ नैपुणी जनित महायशो विभव सारमु' - अर्थात् हंस, क्षीर और पानी को अलग करता है। उसी प्रकार वह गुणावगुण विवेक ज्ञान के भेद को जाननेवाले का संकेत भी है। इस लोक से जो जीव बंधमुक्त हुआ, उस जीव की आत्मा हंस है। ऐसे हंस पर परमहंस श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की शोभायात्रा समुचित ही है। इनका दर्शन भक्त जन के लिए आनंददायक भी है। मानस-सरोवर में हंस विचरण करते हैं। अनन्य भक्तों के मनरूपी जलकुंड में परमात्मा सदा विचरण

करता रहता है। आत्म-अनात्म संबंधी विवेक बुद्धि संपन्न व्यक्ति ही आत्म दर्शन कर सकता है। इस तत्व को अन्नमाचार्य ने यों प्रस्तुत किया - 'हंस चेति पालु नीरु नट्लाये ब्रतुकु' (मेरा जीवन हंस की विवेकबुद्धि समान हुई यानी मैं ने जीवन की सार्थकता को पहचाना)। हंसवाहन का संकेतार्थ यही है। भगवान ने हंस के रूप में ही ब्रह्म को वेदों का उपदेश दिया। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी हंसवाहनारुढ़ होकर वाग्देवी सरस्वती के रूप में आत्मा-अनात्मा का तात्विक बोध कराता है।

4. सिंहवाहन

तीसरे दिन सुबह को मलयप्प स्वामी अकेले सिंहवाहन पर यात्रा करते हैं। सिंह, मृगराज कहलाता है। श्रीकृष्ण ने सिंह की विशिष्टता का वर्णन इस प्रकार किया - 'मृगाणाम् च मृगेन्द्रोहम्' - 'मृगों में मैं इंद्र हूँ।' विष्णु सहस्रनाम में 'सिंह' नाम प्रस्तुत है। श्रीमहाविष्णु ने सिंहमुखी बनकर दुष्ट हिरण्यकशिपु का संहार किया तथा भक्त प्रह्लाद की रक्षा की। योगशास्त्र के अनुसार सिंह, वाहन शक्ति एवं गमन शक्ति का प्रतीक है। इसीलिए भीम को सिंहबलि कहते हैं। श्रीहरि के आनंदनिलय के चारों ओर सिंह की मूर्तियाँ, संरक्षण शक्ति का संकेत बनकर दिखाई देते हैं। ब्रह्मोत्सव में सिंहवाहन पर यात्रा के लिए निकलनेवाले श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी, दुष्ट संहार तथा भक्त जन की रक्षा के लिए संकेत बनकर दर्शन देते हैं।

5. मोतीवितानवाहन

तीसरे दिन, रात को मोतीवितान वाहन पर श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी शोभा यात्रा के लिए तिरुमल माड़वीथियों में निकलते हैं। 'मोती', शीतलता को प्रदान करती है। स्वाति नक्षत्र के लगने पर

स्वातिकार्ति के समय वर्षा की बिन्दु समुद्र की सीपी में गिरकर मोती बनती है। श्रीकृष्ण का वर्णन - 'नासाग्रे नवमौक्तिकम्' यानी नासिका के अग्र भाग में नवीन मोती को धारण करनेवाला होता है, तो वेङ्कटेश्वर स्वामी 'मौक्तिक स्रग्वि' (मोतियों की माला को धारण करनेवाला) के रूप में, नित्यप्रति स्तुत्य हैं। श्रीमन्नारायण का वर्णन 'मुक्तातपत्रितानंत सहस्र फ़ण मंडलुडु' - मोतियों से बनी छाता के समान आदिशेष के सहस्रफ़ण के नीचे रहने वाला, इस रूप में किया जाता है। मलयप्प स्वामी उभय देवेरियों के संग स्वच्छ मोतियों से बनी मोतीवितान जो वातानुकूल मंदिर समान होता है, उसको वाहन बनवाकर शोभा यात्रा के लिए निकलता है और भक्तों को दृगपर्व प्रदान करता है।

शरन्नवरात्रि (दशहरे का समय) के समय निर्मल आसमान में चमकनेवाले तारों से बढ़कर जो विद्युत्दीपालंकार किया जाता है, उसके बीच मोती वितान वाहन भक्तों को नयनानंद प्रदान करते हुए चलता है। शीतल मोतीवितान में शीत उपचार को स्वीकारनेवाले श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का दर्शन भक्तों के ताप को दूर करता है। वेङ्कटेश्वर स्वामी यहाँ ऐसा दिखाई देते हैं - 'नीरमु मुत्यमट्लु नलिनीदल संस्थितमै तनर्चु, ना नीरमे शुक्तिलो बडि मणित्वमु गांचु समंचित प्रभन्' - 'पानी का बूँद नलिन के पत्ते से लगकर मोती जैसा दिखाई देता है। वही पानी का बूँद सीपी में आश्रय लेकर मोती जैसे चमकता है। इसलिए हे भक्तगण! आप भी आश्रित बिन्दु न बनकर, मेरा शरण लेकर वास्तविक सुख एवं सीपी के अंदर की स्वच्छ मोती जैसा बनो' - इस वाहन का प्रतीकात्मक उपदेश इस रूप में प्रस्तुत हुआ है। वार्षिक ब्रह्मोत्सव में, मोती वितान वाहन सेवा में श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी बकासुर की चोंच को दूर्वा की तरह चीरता हुआ दिखाई देता है। इस वाहन में वेङ्कटेश्वर स्वामी श्रीकृष्ण के रूप में दिखाई

देते हैं। जिस भाँति श्रीकृष्ण ने गोपबालाओं की रक्षा की, उसी भांति वेङ्कटेश्वर शिष्ट भक्तों को दुष्टों के चंगुल से बचाता है।

6. कल्पवृक्षवाहन

चौथे दिन सुबह को श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी कल्पवृक्षवाहन पर भक्तों को दर्शन देता है। ''एल्लऋतुवुलंदु नेलरारि परुवमै कोरिवच्चुवारि कोर्केल नीनेडु वेल्पुमानु पालवेल्लि बुट्टे'' (कल्पवृक्ष, ऐसा वरप्रदायिनी है जो सभी ऋतुओं में यौवनावस्था से युक्त रहकर याचकों को मुँह माँगा वर प्रदान करने वाली टोकरी है) - सुर और असुर जब अमृत के लिए क्षीर सागर का मंथन कर रहे थे, तब सभी ऋतुओं में हरा-भरा रहकर जित माँगो तित देत की तरह 'कल्पवृक्ष' क्षीरजलधि से उद्भूत हुई। कल्पवृक्ष केवल भौतिक सुखों को प्रदान करती है। कल्पवृक्ष पर विराजमान श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी लौकिक एवं पारलौकिक सुख प्रदान करता है। स्वामी, आश्रितों का कल्पवृक्ष है। स्वामी ने कृष्णावतार में सत्यभामा की इच्छा पूर्ति करने के लिए देवभूमि से इस प्रसू पर पारिजात कल्पवृक्ष को ले आकर प्रतिष्ठित किया। इस कलियुग में आश्रित भक्तजनों की इच्छा पूर्ति के लिए कल्पवृक्षवाहनारूढ़ होकर भ्रमण कर रहा है। वेङ्कटेश्वर स्वामी, कल्पवृक्ष वाहन पर गऊ रक्षक गोपाल के रूप में दृगपर्व प्रदान करता है। गायों की रक्षा करनेवाला गोविन्द भक्तजनों की भी रक्षा करता है। कल्पवृक्ष, भू का चक्रवर्ती है। तीनों लोकों में दाता के रूप में यश प्राप्त किया हुआ वृक्ष है यह कल्पवृक्ष। वह स्वर्ग में है। इस कलियुग में आश्रित कल्पवृक्ष जैसा स्वामी, भक्तजनों के सामने कल्पवृक्षवाहनारुढ़ बनकर भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करता रहता है। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी ही भक्तों का कल्पवृक्ष है।

7. सर्वभूपालवाहन

ब्रह्मोत्सव के चौथे दिवस की रात को सर्वभूपाल वाहन पर श्रीदेवी - भूदेवी समेत श्रीमलयप्प स्वामी विहार यात्रा के लिए निकलते हैं। यह एक सुवर्ण मण्ड़प है। रात्रि के समय विद्युत दीपों की कांति में सुवर्ण मण्डप की झिलमिलाहट में उभय देवेरियों के साथ मलयप्प स्वामी भक्तजनों को दर्शन प्रदान करते हैं। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी सर्वभूपाल मौलिमणिरंजित पादपीठ पर खड़ा रहते हैं। चूँकि, स्वामी समस्त पृथ्वी के शासकों के शासक यानी चक्रवर्ती हैं, इसलिए इस उत्सव में जितने राजा दक्षिण (सेतु) से लेकर उत्तर (शीतनग) तक, एवं उदयास्ताचल (पूर्व से पश्चिम) के होते हैं, वे सभी वाहन के अंग बनते हैं। (श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी शासकों की गिनती में अष्टदिक्पालक देवता भी गिने जाते हैं।)

सेवापराः शिव सुरेश कृशानु धर्म
रक्षोम्बुनाथ पवमान धनाधिनाथाः ।
बद्धांजलि प्रविलसन्निज शीर्ष देशाः
श्रीवेङ्कटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के सुप्रभात समय में अष्टदिक्पालक यानी, शिव, इंद्र, अग्नि, यम, निरुति, वरुण, वायु, कुबेर, आदि शिरसा नमन करते हुए सेवा करते रहते हैं।

राजा या शासक, प्रजा के रक्षक होते हैं। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी समस्त प्रजा और समस्त राजाओं का रक्षक है। सभी शासकों का अधिपति है स्वामी। इसीलिए समस्त भूपालक स्वामी के वाहन बनकर सेवा करते हैं। यह वाहन समस्त भक्तों को संकेत देता है यथा - 'हे भक्तगण! आप अपने हृदय को स्वामी का वाहन बनाकर स्वामी की सेवा करो और अपना जीवन कृतार्थ बनाओ।' सर्वभूपाल वाहन में श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी, कालियमर्दन में दुष्ट संहारक कृष्ण के रूप में दिखाई देते हैं।

8. मोहिनी अवतार

पाँचवे दिवस सुबह को वेङ्कटाचलपति, स्वर्ण पालकी में लाज और चुश्ती उँडेलते हुए मोहिनी रूप धारण करके राक्षसों को मोहित करनेवाली जगन्मोहिनी बनकर यात्रा के लिए निकलते हैं। श्रीकृष्ण, गजदंत से बनी पालकी में पीछे - पीछे यात्रा करते आते हैं। भागवत् में विष्णु के मोहिनी वृत्तांत को बड़े विस्तार से प्रस्तुत किया गया है। सुर और असुर अमृत प्राप्ति के लिए क्षीर सागर का मंथन करते हैं। अंततोगत्वा क्षीरजलधि से अमृत निकलता है। उसके पान के लिए देव-राक्षस आपस में लडते हैं। उस संदर्भ में जगन्नाटक सूत्रधारी श्रीमहाविष्णु जगन्मोहिनी का भेष धारण करके, राक्षसों के साथ धूर्तता करके, अमृत को देवताओं में बाँट देता है। मोहिनी अवतार सांकेतिक अर्थ प्रस्तुत करता है यथा - अहंकार के कारण राक्षसों को अमृत नहीं मिला जबकि आश्रय में आये देवताओं को अमृत मिला।

मोहिनी अलंकार में मलयप्प स्वामी खड़ी मुद्रा में नहीं बल्कि बैठे हुए दिखाई देते हैं। स्त्रियों से जितने आभूषण पहने जाते हैं उतने सारे आभूषणों से वे सुसज्जित दिखाई देते हैं। स्वामी को रेशमी साड़ी पहनाई जाती है, मुकुट पर अमूल्य रत्नजडित सूर्य-चंद्र के अलंकारोपकरण सुसज्जित किए जाते हैं। स्वामी की नासिका में वज्रजडित नथनी और नासिकाग्र नत्थू लगाते हैं। ऊर्ध्व हस्तों में शंख-चक्र के स्थान पर प्रफुल्लित पद्मों को रखते हैं। स्वामी का दक्षिण वरद भंगिमा में रहनेवालां हस्त, मोहिनी अवतार में अभयहस्त बनता है। इस मनोहर भेष में

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी भक्तों को दृगपर्व प्रदान करते हैं। ब्रह्मोत्सव के दौरान सभी वाहन, शोभा यात्रा के लिए वाहन मण्ड़प से निकलते हैं। लेकिन मोहिनी अवतार के संदर्भ में, पालकी में श्रीहरि को आलय से बाहर निकलते ही शोभा यात्रा प्रारंभ होती है। श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का मोहिनी अवतार इस प्रकार का उपदेशात्मक संदेश देता है, यथा - बल के कारण गर्व रखनेवाले, अहंकारी, कार्य सिद्धि नहीं कर पाते, विनय एवं प्रपत्ति से जो भगवान का आश्रय लेता है, वह निश्चित ही परिश्रम का फ़ल भोक्ता बनता है। मोहनी अवतार की भांति ब्रह्मोत्सव की सभी वाहन सेवायें ऐतिहासिक कथा प्रसंगों, पौराणिक कथांशों से युक्त रहते हैं। ये भगवान की - विष्णु की - सर्व व्याप्ति, संरक्षण भाव को प्रकट करते हैं - यथा 'सर्वं विष्णुमयं जगत्'।

9. गरुड़सेवा

श्लोक ।। कपिलाक्षं गरुत्मंतम् सुवर्ण सदृश प्रभम्
दीर्घ बाहुं बृहत्स्कंधम् वन्दे नागांग भूषणम् ।।

तिरुमल में मनाये जानेवाले नवाह्निक ब्रह्मोत्सव में पाँचवें दिवस की रात का 'गरुड़ोत्सव' प्रमुखता रखती है। 'वेदात्मा विहगेश्वरः' के अनुसार गरुत्मंत वेदस्वरूपी हैं। उसके अंग-प्रत्यंग वेदमूलों के प्रतिबिम्ब माने जाते हैं। विष्णु और गरुड़ का मेल वेद और शीर्ष का योग मालूम पड़ता है। वेद के पाँच भेद हैं - ऋग्वेद, कृष्ण यजुर्वेद, शुक्ल यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद। इसीलिए नौ दिनों के ब्रह्मोत्सव में पाँचवे दिन के रात को गरुड़ोत्सव किया जाता है। गरुड़ पंचाक्षरी में केवल पाँच अक्षर ही होते हैं - (ओम् पक्षी स्वाहा)। इसके कारण भी 'पंचवर्ण रहस्य' नाम से स्तुत्य गरुड़ोत्सव पाँचवें दिन को मनाया जाता है। तिरुमल का 'गरुड़ सेवा'

प्रमुखता एवं, विशिष्टता रखती है। गरुड़ सेवा के समय तिरुमल में देश के सभी कोनों से लाखों की संख्या में भक्तगण उपस्थित रहते हैं।

''श्री शेषशैल गरुड़ाचल वेङ्कटाद्रि, नारायणाद्रि, वृषभाद्रि, वृषाद्रि मुख्याम्'', इन सप्तगिरियों में गरुड़ाद्रि एक पर्वत का नाम है। यह पर्वत गरुड़ाकार में दृष्टिगोचर होता है। इस पर्वत को -

''कृते वृषाद्रिम् वक्ष्यन्ति त्रेतायाम् गरुड़ाचलम्
द्वापरे शेषशैलम् च वेङ्कटाद्रिम् कलौ युगे''

वामन पुराण (24 - 106) यह बताता है कि तिरुमल का नाम त्रेतायुग में 'गरुडाद्रि' था। वैकुंठ का वेङ्कट नामक विष्णुदेव के क्रीड़ा पर्वत को वराह विष्णु की आज्ञा के अनुसार गरुड़ ने उसे ले आकर इस प्रसू पर स्वर्णमुखी नदी की उत्तर दिशा के कूल पर प्रतिष्ठित किया। इसलिए इस पर्वत का नाम गरुडाद्रि पड़ा। इसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण में ऐसा मिलता है -

वैकुंठ लोकात् गरुडेन विष्णोः
क्रीड़ाचलो वेङ्कट नामधेयः ।
आनीय च स्वर्णमुखी समीपे
संस्थापितो विष्णु निवास हेतोः ।।

महर्षियों ने गरुड़ाद्रि - वेंकटाद्रि को वेदों का मूर्तिभूत रूप कहा।

'अराइ काणे विकटे गिरिम् गच्छेति तम् विदुः
एवम् वेदमयः साक्षात् गिरीन्द्रः पन्नगाचलः'

ऋग्वेद (10-155-1) इस प्रकार उपदेश देता है - 'हे पुरुषार्थ कामुक! तुम्हारी इच्छा पूर्ति के लिए श्रीनिवास के निवास स्थान वेङ्कट

पर्वत पर जाओ।' शेषाचल वेदस्वरूपा बनकर खड़ा है। शेषाचल का दूसरा नाम गरुड़ाचल है और गरुड़ स्वयं वेदस्वरूपा हैं।

श्लोक ।। दासो मित्रमं तालवृन्तम् वितानं
पीठं वासो वाहनं च ध्वजश्च ।
एवं भूत्वाऽनेकधा सर्वथा सः
श्रीशं श्रीमान सेवते वैनतेयः ।।

इसका अर्थ है - विनतासुत, श्रीनिवास का दास बनकर, सखा बनकर, तालवृन्त बनकर, चाँदनी बनकर, आसन बनकर, आवास, ध्वज बनकर, अन्यान्य प्रकार की सेवायें, उस भगवान को प्रदान कर रहा है। गरुड़, विष्णु भगवान का वाहन है, केतन भी है। इसीलिए गरुड़ ध्वज के फ़हराने के साथ ब्रह्मोत्सव प्रारंभ होता है तथा गरुड़ केतन के अवरोहण पर ब्रह्मोत्सव समाप्त होता है। गरुड़, स्वयं ध्वजस्तंभ पर चढ़कर समस्त देवताओं (तैंतीस करोड देवता) को श्रीहरि के ब्रह्मोत्सव में आमंत्रण देता रहता है।

नौ दिवसीय वेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव में, पाँचवे दिवस की रात को गरुड़ सेवा होता है, जिसमें मलयप्प स्वामी को मकरकण्ठी, लक्ष्मीहार, वेङ्कटेश्वर सहस्रनाम माला आदि से अलंकृत करते हैं। ये सभी नित्यप्रति मूलविराट को शोभित करती हैं। इसलिए मूल विराट (ध्रुव मूर्ति) वेङ्कटेश्वर स्वामी और गरुड़ पर आरूढ़ मलयप्प स्वामी (उत्सव मूर्ति) में कोई भेद नहीं होता। यह रूढि है। कहा जाता है कि इस उत्सव मूर्ति का दर्शन शुभप्रद एवं मोक्षदायिनी होता है। उसी दिन तमिलनाडु के श्रीविल्लिपुत्तूर के गोदादेवी (आण्ड़ाल) के गले में अलंकृत फूल मालाओं (आमुक्त मालाओं) को निकालकर, गरुडोत्सव की शोभायात्रा के समय

तक तिरुमल पहुँचाकर मलयप्प स्वामी के गले में अलंकृत करते हैं। कृष्णा नदी के कूल पर स्थित श्रीकाकुल क्षेत्र में विराजमान आंध्र विष्णु भगवान के आदेशानुसार श्रीकृष्णदेवराय ने 'आमुक्तमाल्यद' प्रबंधकाव्य की रचना की जिसमें कवि ने गोदादेवी के द्वारा अपने गले के हार को निकालकर विष्णु को समर्पित करने का प्रसंग प्रस्तुत किया। कृष्णदेवराय ने आंध्र विष्णु का दूसरा अवतार तिरुमल वेंगडनाथ, जो उनका अपना इष्टदैव था, उनको समर्पित किया। कृष्णदेवरायलु के जमाने से ही गोदादेवी के जन्मस्थान श्रीविल्लिपुत्तूर के मंदिर से आण्डाल तायार (गोदादेवी) को अलंकृत, तदुपरांत निकाली गई मालायें श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव के दौरान गरुड़ सेवा के दिन इन फूल मालाओं को स्वामी पर सुअलंकृत करने का संप्रदाय प्रारंभ हुआ। आन्ध्र विष्णुदेव की इच्छा पूरी हुई। साथ में श्रीकृष्णदेवरायलु भी जन्मतः धन्य हो गये। आमुक्तमाल्यदा प्रबंध काव्य इसका साक्षी बनकर दृष्टिगोचर हो रहा है। उसी दिन (गरुड़ सेवा) को आन्ध्र प्रदेश राज्य सरकार की ओर से मुख्यमंत्री द्वारा समर्पित रेशमी वस्त्रों से स्वामी का अलंकार होता है। इतना ही नहीं, चेन्नै के भूस्वामियों से समर्पित नये छत्रों के साथ, स्वामी अकेले सुअलंकृत स्वर्ण गरुड़ पर विराजमान होकर तिरुमल माड़वीथियों में शोभा यात्रा के लिए निकलकर अपने वरदहस्त से असंख्य भक्तजनों को वर प्रदान करते हैं।

श्लोक ।। गोदा समर्पित सुवासित पुष्पमालाम्
लक्ष्मी हार मणि भूषित सहस्र नाम्नाम् ।
मालाम् विधार्य गरुड़ोपरि सन्निविष्टः
श्री वेङ्कटाद्रि निलयो जयति प्रसन्नः ।।

गोदादेवी के कंठ से निकाली गई फूलमालाओं, लक्ष्मीमाला, सहस्रनाम माला को धारण करके वेङ्कटाद्रि प्रभु प्रसन्न होकर गरुड़ वाहन पर आरुढ़ होकर शोभा यात्रा में निकला है।

चेन्नपट्टणम् के 'तिरुपति अम्ब्रेल्ला छारिटीस' (अभी 'हिन्दू धर्मार्थ समिति' नाम से जाना जाता है) के लोग श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के लिए हर वर्ष छःबडे - तीन छोटे, कुल नौ नवीन छत्र तैयार करके, उनकी पूजा करवाकर, चेन्नै से तिरुमल तक शोभा यात्रा में पैदल ले आकर भक्ति - श्रद्धा के साथ गरुड़वाहन के दिन समर्पित करते हैं। इनके साथ छत्रों के दायप्राप्त (मिरासी) उत्तराधिकारी, श्रीहरि को फूल तथा वस्त्र (फूलों को सजाने से पहले स्वामी को वस्त्र पहनाया जाता है ताकि फूलों के वृंतडंठल या यहाँ तक कि सुकोमल पंखुडियां भी स्वामी के शरीर को न चुभे), टोपी (सुअलंकृत मुकुट), वक्षःस्थल लक्ष्मी के लिए लहंगायें तथा तिरुचानूर पद्मावती देवी माँ को दो बड़े छत्र, टोपी (अलंकृत मुकुट), हल्दी-कुंकुम-चंदन आदि को 'श्रीवारि सारे' (श्रीहरि का पद्मावती माँ को प्रस्तुत उपहार) के रूप में बाँस की टोकरी में रखकर पद्मावती माँ को समर्पित करते हैं। ये भक्त चेन्नै की पुरुवीथियों में उपर्युक्त सभी सामग्री को शोभा यात्रा में निकलवाकर, पैदल ही घूम-घूमकर, गरुड़ोत्सव के दिवस तिरुमल पहुँचते हैं। तब देवस्थानम् के अधिकारीगण इनका यथोचित सम्मान करके उनसे उपहार स्वीकारते हैं। वेङ्कटेश्वर स्वामी का गरुड़ोत्सव विशिष्ट-अमूल्य आभरणालंकार, नवीन रेशमी वस्त्रों से, नूतन छत्रों के साथ बड़े वैभवपूर्ण ढंग से नयनपर्व बनकर मनाया जाता है। इस गरुड़ोत्सव वैभव का वर्णन अन्नमाचार्य ने इस प्रकार किया -

''पल्लिंचि गरूडुनिपै नी उब्बुन नेक्क....
बंगारू गरूडुनिपै नीवु वीधु लेग

चेंगट श्रीवेङ्कटेश सिरूलु मूगे
संगति नलमेल्मंग संतसान विर्रवीगे
पोंगारू देव दुंदुभुलु पैपै वागे।'' - **11 - 70**

प्रहर्ष सहित जब गरुड़ पर तुम हुए आरुढ़ जीन की मदद से
स्वर्ण गरुड़ पर तुम निकले तिरुवीथियों में
श्रीवेङ्कटेश सुअलंकृत हुए आभूषणों से
संग उल्लास में अलमेलमंगा गंभीर बनी
देव दुंदुभियां गगन में बजने लगीं - 11 - 70

उस दिन के कोलाहल तथा उत्सव की उत्तेजना का वर्णन इस प्रकार किया -

''इदु गरूडुनि नी वेक्किननु
पट पट दिक्कुलु बग्गन पगिले'' - **2 - 92**

यहाँ गरुड पर आरुढ़ हुए तुम कि
फ़ट फ़ट गई दिशायें सारी

इस उत्सव में स्वामी के संग देवेरियाँ नहीं रहती हैं। मलयप्प स्वामी अकेले इस उत्सव में -

''चिवुरू बोटूलपु दोइ जेन्दम्मुलन दार्क्ष्यु
हस्तोदरमुल दिव्यांघ्रुलमर''

- स्वामी के चरण लालरंगीन कमल जैसे हैं और गरुड़ की हथेलियाँ मानो कोंपल की पोटिलियाँ हो। वेङ्कट विष्णुदेव, गरुड़ के कोंपल पोटिलियों जैसी हथेलियों में अपने लालवर्ण के चरणों को गरुड़ के हाथों में रखकर गंभीर मुद्रा में बैठे रहते हैं। ऐसी मुद्रा यही सूचित करती है कि

उनके चरण ही त्राण पाने के उपायोपकरण हैं। यही द्वयमंत्र सार भी है। इसलिए गरुड़वाहन सेवा द्वयमंत्रार्थ का प्रतीक लगता है।

विष्णुदेव को ऐसा वाहनारुढ़ होते देखकर, तन्मयता में परवश होकर पेरियाल्वार (विष्णुचित्त) ने 'पल्लांडु-पल्लांडु' कहकर मंगलाशासन किया। उसी प्रकार भक्त रामदास ने भी ऐसा ही कहा - ''गरुड़ गमन रारा - ननु नी करुण नेलुकोरा' अन्नमाचार्य ने निजी एवं समस्त भक्तों की मिन्नतों को स्वामी तक पहुँचाने के लिए गरुड़ से इस रूप में प्रार्थना की -

''दासवर्गमुलकेल्ला दरिदापु मीरे कान
वासिकि नेक्किंचरादा वसुधलो मम्मुनु
आयितमै गरूडुंड! अटूटे मीरू चेयरादा
येयेड़ विन्नपमु माकेमि वलसिनानु''

''दास वर्ग समस्त के तुम पास ही हो
इस पृथ्वा पर हमें भी बड़ा बना दो
हे गरुड! तैयारी करके पहुँचाओ स्वामी तक
यहाँ - वहाँ की हमारी मनौतियों को''

इसके उत्तर में वेङ्कटेश्वर स्वामी, ऐसा कहते रहते हैं - ''हे भक्तगण! आपकी रक्षा हेतु मैं शंख - चक्रादि आयुध के साथ गरुड़ पर आरुढ़ होकर तैयार रहूँगा। तुम मेरी शरण माँगो, मेरे चरणों पर आश्रय पाओ। आपके उद्धार का भार मुझपर छोड़ दो। आपकी रक्षा मैं अवश्य करुँगा।'' इसीलिए गरुड़ वाहन का दर्शन सर्वपाप हारक होता है, सकल संपत्ति प्रदाता होता है, भक्तगणों का श्रेयोदायक भी होता है।

10. हनुमंतवाहन

ब्रह्मोत्सवों के छटवें दिवस सुबह को, श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी अकेले हनुमान को वाहन बनाकर वेङ्कटाद्रिराम के रूप में तिरुवीथियों में शोभायात्रा के लिए निकलते हुए दर्शन देता है। भगवान, भक्तों से ऐसा कहता हुआ दिखाई देता है कि मैं ही त्रेता युग का श्रीराम हूँ।

''कृते तु नारसिंहोऽभूत् त्रेतायाम् रघुनंदनः
द्वापरे वासुदेवश्च कलौ वेङ्कट नायकः

कृतयुग के नरसिंह स्वामी, त्रेता के श्रीराम, द्वापर युग के श्रीकृष्ण तथा कलियुग के वेङ्कटेश्वर सभी एक ही हैं। सभी श्रीमहाविष्णु के अवतारी पुरुष ही हैं। इसलिए -

''कौसल्या सुप्रजा राम पूर्वा संध्या प्रवर्तते
उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्त्तव्यं दैवमाह्निकम्''

श्रीराम के नाम से ही सुप्रभात का श्रवण करते हुए श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी भक्तों से सुप्रभात सेवा ले रहा है। लोकहित के लिए ही मैं ने त्रेता में श्रीराम के रूप में और कलियुग में वेङ्कटेश्वर के रूप में अवतार ग्रहण किया। उसको पुनः याद दिलाने के लिए अपर भक्त हनुमान पर विराजमान होकर मैं वेङ्कटाद्रिराम के रूप में आप को दिखाई दे रहा हूँ। हनुमान ध्यान, भक्ति एवं आदर्श का प्रतीक है। हे भक्तजन! आप भी हनुमान की तरह वेङ्कटेश्वर के दास बनकर, अनन्य भक्त बनकर अपने अभीष्ट की सिद्धि पाओ, कृतार्थ बनो। यही भगवान का उपदेश है।

जब राम - रावण युद्ध हो रहा था, तब रावण रथ पर आरुढ़ होकर लड़ रहा था जबकि राम हनुमान की भुजा पर आरुढ़ होकर युद्ध लड़

रहा था। हनुमान ने यह साबित कर दिया कि भक्त भगवान से शक्तिशाली होता है। यह भी निश्चयपूर्वक बता दिया कि भगवान से भी उसके नामस्मण का आश्रय श्रेयदायक है। कहना नहीं चाहिए, लेकिन वास्तव में श्रीराम से हनुमान के भक्तों की संख्या अधिक होती है। केसरी की पत्नी अंजनादेवी ने वेङ्कटाद्रि के आकाशगंगा तीर्थ के पास तपस्या की और परिणामस्वरूप हनुमान को जन्म दिया। इसलिए हनुमान का जन्मस्थान आकाशगंगा का कूल है। उस पर्वत का नाम अंजनाचल पड़ गया। इस प्रकार अंजना का पुत्र, अंजनाद्रीश्वर - श्रीवेङ्कटेश्वर का वाहन बना।

ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने हनुमान के वैभव का यशोगान निम्नलिखित रूप से किया, यथा -

''इतडे यतडुगा बोलेलिक बंटुनु नैरि
मिति लेनि राघवुडु मेटि हनुमंतुडु
जलधि बंधिन्चि दाटि चलपट्टि राघवुडु
अलरि ऊरके दाटे हनुमंतुडु
अलुकतो रावणुनि यदटणचे नतडु
तलचि मैरावणुनि दण्डिन्चे नितडु''

इस भगवान और उस भक्त में सारूपता
अमित राघव और चेला हनुमान
राघव ने जलधि पर पुल बांधकर पार किया
हनुमान ऐसे ही लांघ गया
रूठकर उसने रावण को मिटाया
सोचकर मैरावरण को दण्ड दिया इसने

श्रीवैष्णव सम्प्रदाय में गरुड़ सेवा को 'पेरिय तिरुवडि' तथा हनुमंत वाहन सेवा को 'सिरिय तिरुवडि' कहकर उनका यशोगान करते हैं। इसके नेपथ्य में एक चिन्तन इस प्रकार है कि गरुड़ चारों युगों में विष्णु भगवान का वाहन एवं सेवक बनकर रहता है लेकिन हनुमान केवल त्रेतायुग में श्रीराम की सेवा करता है।

इसी दिन दोपहर को श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी का वसंतोत्सव मनाया जाता है। यह मंदिर के अंदर स्थित रंगनायक मंटप में संपन्न होता है। यह उत्सव सन् 1993 से मनाया जा रहा है। संध्या समय को श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी स्वर्ण रथ पर आरुढ़ होते हैं। संध्या में डूबते सूरज के अरुण किरणों की कांति जब प्रसूत होती रहती है, तब वेङ्कटेश्वर स्वामी, अपनी देवेरियों के संग तिरुमल की वीथियों में स्वर्णरथ में विराजमान होकर, शोभा यात्रा के लिए निकलकर भक्तों को अपने दर्शन से नेत्रपर्व प्रदान करता है। ब्रह्मोत्सव के दौरान जिस दिन को हनुमंत वाहन सेवा होता है, उस संध्या को ऊँजल सेवा नहीं होती है। वसंतोत्सव के बाद स्वर्णरथोत्सव को 'स्वर्ण रथ रंग डोलोत्सव' नाम से उत्सव मना रहे हैं। स्वर्ण रथोत्सव में 'कल्याणकट्ट' संघ के सदस्य रथ पर स्वर्ण छत्र को सुअलंकृत करते हैं।

11. गजवाहन

ब्रह्मोत्सव के छटवें दिवस रात को श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी अकेले ही गजराज पर विराजमान होकर शोभा यात्रा के लिए निकलता है और उस का दृश्य समय भागवत के 'गजेन्द्र मोक्षम्'' का स्मरण कराता है - हे भक्तगण! यह गजराज अपनी शक्ति का दम्भी है, इसीलिए मगरमच्छ

का शिकार होकर, बहुत समय तक उसके साथ संघर्ष कर करके, अंत में मेरी स्तुति की और शरण माँगी यथा -

''लावोक्किंतयु लेदु, धैर्यमु विलोलंबय्ये, ब्राणंबुलुन्
ठावुल् दप्पेनु, मूर्छवच्चे दनुवुन डस्सेन श्रमम्बय्येडिन्
नीवे तप्प नितः परम् बेरुग मन्निम्पं दगुन् दीनुनिन्
रावे ईश्वर! कावबे वरदा! संरक्षिन्चु भद्रात्मका''

'हे ईश्वर! मेरी शक्ति थोड़ी भी बची नहीं है, मैं धीरज भी खो गया, मेरे प्राण अपनी-अपनी जगहों से हट रहे हैं, मैं पीला पड गया, शरीर अशक्त हो गया, थकान हो रही है, अब इस मगरमच्छ से संघर्ष करने का समर्थ्थ नहीं रहा, तुम्हें छोडकर मैं किसी और को जानता नहीं हूँ, मुझ दीन का उद्धार तुम्हीं को करना होगा, हे ईश्वर! (यहाँ ईश्वर शब्द भगवान का वाचक है, शिव का वाचक नहीं है। इसीलिए जगन्नाथ विष्णु भगवान ने गजेन्द्र के आर्तनाद को सुनकर उसकी रक्षा की) जल्दी आओ हे वरप्रदाता! मेरी रक्षा करो परमात्मा! मेरी रक्षा करो।' उसी पल को विश्वव्यापी श्रीमहाविष्णु जो वैकुण्ठपुर के ऊर्ध्व पुण्ड्र सौध (भवन) के अंदर स्थित वनांतरामृत जलकुंड प्रांत के कूल पर रमा समेत पर्यंक विनोद में था, त्राण के लिए भक्त की पुकार सुनकर, वैकुंठ छोड़कर पृथ्वी पर उतरकर, मगरमच्छ को मारकर, गजराज की रक्षा की। 'हे भक्तगण! आप केवल निजी शक्ति या बल पर निर्भर न रहकर अपना भार मुझ पर छोड़ दो। मैं निश्चित ही आपकी रक्षा करूँगा।' गजवाहनारुढ़ वेङ्कटेश्वर स्वामी भक्तों को यही उपदेश व आश्वासन देता है।

सांसारिक, तथा ऐहिक बंधन एक जलकुंड है, मगरमच्छ कर्म (हमारे व्यवहार) का प्रतीक है, गजेन्द्र जीवात्मा का प्रतीक है। भवबंधन

तथा मांसल व्यवहार से मुक्त करनेवाला ही विष्णु भगवान है। हर भक्त गजेन्द्र ही है। मर्त्यलोक तथा कर्म वलय से मुक्ति दिलानेवाला भगवान कलियुग के श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी ही है।

आजकल के वैकुंठम् काम्प्लेक्स - 1 के स्थान पर इससे पूर्व गजेन्द्र मोक्ष का जलकुंड (कुँआ) था। लेकिन समय के साथ वह भर गया।

राजमर्यादा, चतुरंगबल में गजबल एक विशेष स्थान रखता है। वर्तमान समय में भी गजारोहण (गज पर विहार करना) एक गौरव और सम्मान का सूचक है। गजेन्द्र मोक्ष का भागवतांश शरणागति के प्रयोजन की पुरागाथा है।

ब्रह्मोत्सव में गजवाहन पर अकेले वेङ्कटेश्वर शोभायात्रा में निकलते हैं।

12. सूर्यप्रभावाहन

भास्कराय विद्महे
महाद्युतिकराय धीमहि
तन्नो आदित्यः प्रचोदयात् ।।

उपर्युक्त श्लोक सूर्य गायत्री है। ब्रह्मोत्सव के सातवें दिन, सुबह को सप्ताश्वरथारूढ़ सप्तगिरीश, वेङ्कटेश्वर वज्रकवच धारण कर सूर्यराश्मि के प्रसरण के समय, तिरुमल की माड़वीथियों में सूर्यप्रभावाहन पर शोभा यात्रा के लिए निकलता है। वे यह सूचित करते दिखाई देते हैं कि सौर मण्ड़ल के केन्द्र में रहनेवाला सूर्य नारायण मूर्ति मैं ही हूँ। ''ज्योतिषाम् रवि रंशुमान्''- भगवान कहता है कि ज्योति स्वरूपों में सूर्य मैं ही हूँ। भगवान का स्वरूप ही ऊर्जा का पुँज है और वह सूर्य में मुख्य रूप से विद्यमान है।

"ध्येयस्सदा सवितृमंडल मध्यवर्ती नारायणः"

वेदोक्ति है कि सौरमंड़ल के केन्द्र में रहनेवाला श्रीमन्नारायण सदा ध्यान करने योग्य व्यक्ति है। इसीलिए हर दिन भारतवासी सूर्योपासना तथा सूर्य नमस्कार करते रहते हैं।

सूर्य नारायण की पूजा गायत्री मंत्र से की जाती है। सूर्य भगवान तेजोनिधि हैं। प्रकृति के लिए वह चेतना प्रदान करनेवाला है। वर्षा का कारक, उस वर्षा के कारण बढ़ने वाले फ़सल, चंद्रमा तथा उसके कारण उगने एवं बढ़नेवाली औषधियों के लिए प्रधान कारक सूर्य प्रभा (सूर्य की ऊर्जा) ही है।

इस ब्रह्माण्ड को प्रकाश देनेवाला सूर्य नारायण मैं ही हूँ - सूर्य प्रभावाहन पर आरुढ़ श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी ऐसी सूचना देते हुए भक्तों को दर्शन देता है और उन पर आरोग्य (स्वास्थ्य) और ऐश्वर्य (संपदा) अनुग्रहीत करता है।

ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने वेङ्कटेश्वर स्वामी का वर्णन ऐसा किया -

उविद वदन चंद्रोदय वेलनु
रवियगु सूर्यप्रभा नी वेगग - 30 - 197

चंद्रोदय समय के सौम्य वदनवाले
सूर्यप्रभा वाहन पर तुम निकले यात्रा के लिए

किसी और स्थान पर अन्नमाचार्य ने ऐसा कहा -

अदिवो चूडरो अंदरू मोक्करो
गुदि गोने ब्रह्मु कोनेटि दरिनि

रवि मंडलमुन रंजिल्लु तेजमु
दिवि चंद्रुनिलो तेजमु
भुवि ननलंबुन बोड़मिन तेजमु
विविधंबुलैन विश्व तेजमु - 2 - 498

वहाँ देखो सभी प्रार्थना करो
स्थापित हुआ भगवान जलकुंड के कूल पर
रवि मंड़ल में प्रकाशमान ज्योति
आकाश के चंद्रमा में उज्जवलता
भांति भांति के विश्व ज्योति

इस प्रकार अन्नमाचार्य ने वेङ्कटेश्वर स्वामी को सौरमंड़ल का केन्द्र पुंज मानकर श्रीमन्नारायण का यशोगान किया।

13. चंद्रप्रभावाहन

सातवें दिवस की संध्या को शीतल मौसम में चंद्रप्रभावाहन पर आरुढ़ होकर श्रीपति तिरुमल माड़वीथियों में भ्रमण करते हैं। सूर्य और चंद्र श्रीमहाविष्णु के दो नेत्र हैं। सुबह, सूर्यप्रभावाहन पर भ्रमण करनेवाले वेङ्कटाद्रि विष्णुदेव, रात को निशाकर, चंद्रप्रभावाहन पर भ्रमण करते हैं। कृष्ण भगवान ने ऐसा कहा - 'नक्षत्राणा महं शशि' - तारागण में मैं चंद्र हूँ। 'चंद्रमा मनसो जातः' - पुरुष सूक्तोक्ति है कि चंद्रमा भगवान के मन से उदित हुआ। सूर्य दिवाकर है और चंद्र निशाकर। चंद्रमा, सूर्य की ऊर्जा से ही चमकता है। इसलिए सुबह सूर्य प्रभावाहन तथा रात को चंद्रप्रभावाहन सेवायें प्रस्तुत की जाती हैं। चंद्रमा, अमृत किरणों का पुंज है। इसलिए मोहिनी अवतार में स्वामी अमृतकलष के साथ दर्शन देता है मानो स्वामी भक्तों को अमृत विद्या का बोध करा रहा हो। 'यथा प्रह्लादनात चंद्रः'-

चंद्रमा के कारण आनंद प्राप्त होता है। उसी प्रकार चंद्रप्रभावाहन पर भ्रमण करनेवाले वेङ्कटेश्वर स्वामी का दर्शन भक्तों को संतोष एवं वर की सिद्धि प्रदान करता है। सूर्य का तेज तथा चंद्र का शीतल तत्व, दोनों मेरे ही स्वरूप हैं, ऐसा कहते हुए श्रीवेङ्कटेश्वर सूर्यप्रभा तथा चंद्रप्रभावाहन के द्वारा द्योतित कर रहा है। सूर्य तथा चंद्रमा, भगवान के दो नेत्र हैं। मनुष्य में सूर्य के कारण दृष्टि, तथा चंद्रमा के कारण मन निर्मित होते हैं।

14. रथोत्सव

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सव का अत्यंत वैभवपूर्ण एवं आकर्षक उत्सव रथोत्सव है। आठवें दिन को सुबह, सूरज की प्रकाशमय किरणों के प्रसरित होते समय मेरू पर्वत समान रथ में श्रीदेवी-भूदेवी समेत श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी विराजमान हो जाते हैं। भक्तगण रथ के लगाम को खींचते हुए तिरुमल की माड़वीथियों में रथोत्सव होता है। सभी भक्त गोविन्द का नामस्मरण करते हुए रथ की रस्सियों को खींचते हैं। भक्तों का इसमें भागीदार बनना इस उत्सव की विशिष्टता है (बाकी वाहनों को केवल देवस्थानम् से संबद्ध लोग ही उठाते हैं। इसीलिए रथोत्सव अत्यंत वैभव एवं कोलाहल के साथ चलता है।

''रथस्थम् केशवम् दृष्ट्वा पुनर्जन्म न विद्यते'' - रथ में विद्यमान विष्णु भगवान का दर्शन करेंगे तो हम जन्म-मृत्य के वलय से मुक्त हो जायेंगे - यह भक्तों का अपार विश्वास है और इसलिए रथोत्सव में स्वयं भक्तगण भाग लेते हैं। ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने रथोत्सव का वर्णन, कीर्तन के रूप में प्रस्तुत किया, यथा -

देवदेवुडेक्केनदे दिव्यरथमु
मावन्टि वारिकेल्ल मनोरथमु - 5 - 225

देवदेव आरूढ़ित हुए दिव्यरथ पर
हम जैसे सामान्य के लिए मनोरथ है - 5 - 225

मिन्नु नेला नोक्कटैन मेटि तेरू
कन्नुल पण्डुवैन श्रीकांतुनि तेरू - 6 - 227

आकाश - भू एक करनेवाला मेरू समान रथ
दृगपर्व देनेवाला श्रीकांत का रथ - 6 - 227

कन्नुल पण्डुगलाय गन्नवारि कंदरिकि
वेन्नुडेगी निल्लदीवो वीथुलनु
अदि येक्के दिरुतेरू असुरुल बेदरग
त्रिदशुलु चेलगग देव देवुडु
कदले बण्डि कण्डूलु घनमैन म्रोत तोड
वेदचल्लु गांतुलतो वीथुल वीथुलनु - 10 - 178

रथोत्सव के समय जब रथ तिरुवीथियों में चलता रहता है, तब भक्तगण अपने भेंट समर्पित करते हैं, तथा रथ जहाँ रुकता है, वहाँ आरती उतारते हैं। इस पावन दृश्य को अन्नमय्या ने भक्तों को सचेत करते हुए रथोत्सव वैभव का वर्णन किया -

एत्तरे आरतुलु इय्यरे कानुकलु
इत्तल नेगि वच्चेनु इंदिरा नाथुडु
गरुड़ ध्वजपु तेरू कनक मयपु तेरू
सिरूलतो वेदमुल चेरूल तेरू

सुरलु मुनुलु बट्टि सोम्पुतोड़ दिव्यगानु
इरवुगनेगि वच्चे इंदिरानाथुडु - 10 - 31

आरती उतारिये उपहार समर्पित कीजिए
रथारूढ़ होकर इंदिरानाथ
गरुड़ ध्वज का रथ, स्वर्णमय रथ
सुर-मुनि सुचारू रीति से खींचने लगे
ललित मुद्रा में इंदिरानाथ चले आए - 10 - 31

वीथुल वीथुल विभुडेगी निदे
मोदमु तोडुत मोक्करो जनुलु
गरुड़ ध्वजमदे कनक रथम् बदे
अरदमु पै हरि यल वाडे
इरूदेसल नुन्नारू इंदिरयु भुवियु
परग बग्गमुलु पट्टरो जनुलु - 10 - 286

वीथियों में श्रीहरि भ्रमण करने लगे
मुदित होकर प्रार्थना करो भक्त गण
गरुड़ ध्वज वही स्वर्ण रथ वही
रथ पर आ रहा है हरि
दोनों ओर उपस्थित हैं श्रीदेवी-भूदेवी
लगाम को पकड़ो जोर से भक्तगण - 10 - 286

तरिगोंड वेंगमांबा ने अपने ग्रंथ 'वेङ्कटाचल माहात्म्यम्' में रथोत्सव वैभव का वर्णन निम्नलिखित रूप से किया -

परम भागवतुलु भक्तितो बाडुचु
नुप्पोंगि याडुचु नुंड़गानु

गरमुलु द्रिप्पि भोग स्त्रीलु मुंदर
जतलुगा नृत्यमुल् सलुपगानु
ग्रममुगा वन्दि मागध सूत बृन्दमुल्
पुरुषोत्तम ख्याति बोगडगानु
शिरमुल गलशमुल् जेर्चि कोंदरू भक्तु
लोक्केड ब्रेरणुल् द्रोक्कगानु
मोनसि कोंदरू गोविन्द यनुचु भक्ति
परशत्वमुचे मिंचि पलुक गानु
रथमुपै दण्डुलमु अनुराग युक्ति
सतुलु मेडलपै नुंडि जल्लगानु - 2 - 131

श्रेष्ठ भक्तगण भक्तिपूर्वक गा रहे
उत्तेजित होकर नृत्य भी कर रहे
हाथों को घुमाघुमाकर भोग स्त्रियाँ
मंथर गति से युग्मों में नाच रहीं
क्रम से वंदि मागध सूत वृन्द
पुरुषोत्तम की ख्याति को आलाप रहे
सिर पर कलष को शोभित कर जहाँ खडे हैं, वहीं नाच रहे
कुछेक भक्त गोविन्द कहते
परवश होकर गान कर रहे
रथ पर तंडुल को अनुराग सहित
सतियाँ छतों से छिड़क रहीं

श्रीनिवास भगवान जब दोनों देवेरियों के साथ रथ में भ्रमण कर रहे होते हैं, तब सभी भक्त तथा भागवतोत्तम गीत गाते, नाच रचाते रहे। रथ

के आगे भोग स्त्रियाँ हाथों को घुमाते-घुमाते दृगपर्व प्रदान करती हुई नाच रही हैं (विजयनगर के चक्रवर्ती कृष्णदेवरायलु के भाई अच्युत देवरायलु (सन् 1529-1542) ने तिरुमल श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी की परिचारिका (सेविका) के रूप में रंजकम् कुप्पसानि की बेटी मुद्दुकुप्पाइ नामक नाट्य कला विशारद को तैनात किया था - इसका आधार, अभिलेख 4-11, दिनांक-6-6-1531 में मिलता है। उस समय देवदासियों को 'एमबेरुमा नडियारु' कहकर उनके प्रति गौरव का भाव रखते थे। देवदासियों के द्वारा शोभायात्रा के आगे नृत्य करने का दृश्य वेंगमांबा ने भी शब्दचित्र खींचकर दिखाया। आजकल आस्थान में सभी स्त्रियाँ, युवक-युवतियाँ प्रवेश करके नृत्य, भजन, दाण्डिया नृत्य आदि करते हुए दर्शकों को आनंद प्रदान करते हैं। कुछके भक्त सिर पर कलष को रखकर पेरिणि नृत्य कर रहे थे। कुछ और भक्त गोविन्द! गोविन्दा! कहकर ऊँची आवाज में नाम स्मरण कर रहे थे। कुछ सुवासिनियाँ माडवीथियों के छतों से रथ पर सेसलु (चावल) बिखेर रही हैं (आजकल भक्तगण रथ पर नमक, कालीमिर्च, चुट्टा आदि बिखेर रहे हैं)।

तिरुमल मंदिर के दीवारों पर रथोत्सव संबंधी अभिलेख देखने को मिलते हैं। ताल्लपाक पेद्द तिरुमलाचार्य ने अपने नाम से आयोजित होने वाले'आनि ब्रह्मोत्सव' तथा 'पेरटासि ब्रह्मोत्सव' में तीन रथों - ब्रह्मदेव, विश्वक्सेन, वेङ्कटेश्वर स्वामी का नाम लेकर कहा कि इन तीन रथों का उपयोग रथोत्सव में किये जाते थे। उन्होंने इससे संबंधित एक धर्मशासन 4-129, दिनांकः17-3-1539 को लिखवाया। एट्टूरू तिरुमल कुमार ताताचार्य ने दिनांक 25-9-1583 में धर्मशासन 6-5 लिखवाया कि अल्पिशि ब्रह्मोत्सव (जिसे उन्होंने अपने नाम पर करवा रहे थे) में तीनों

रथों के अलंकरण के लिए एक रेखैपोन्नु एवं दो पणालु (दोनों तत्कालीन मुद्रायें) का खर्च किया जाएगा।

रथोत्सव, विशिष्ट तत्वज्ञान का बोध कराती है। कठोपनिषद् में आत्मा एवं शरीर के संबंध को रथयात्रा से तुलना करके दिखाया गया है, यथा -

''आत्मानम् रथिनम् विद्धि शरीरम् रथ मेव तु
बुद्धिम् तु सारथिम् विद्धि मनः प्रग्रह मेव च
इंद्रियाणि हया नाहु र्विषयां स्तेषु गोचरान्'' - 3 - 34

शरीर रथ है, बुद्धि रथ का सारथी, मन लगाम है, इंद्रिय घोडे हैं, इंद्रियों की कामनायें दौड़ने के मार्ग हैं। आत्मा (भगवान का अंश जो अंतर्यामी बनकर रहता हो) रथारोही है। घोड़ों जैसी इंद्रियों को मन रूपी लगाम से नियंत्रित कर, रथ रूपी शरीर को बुद्धि कही जानेवाली सारथी के द्वारा अच्छे माग पर चलाकर, रथारूढ़ आत्मा (मैं स्वयं हूँ) यानी - मुझे - पहचानकर, मेरी सेवा कर, कृतार्थ बनिये - ये भक्तों के लिए 'रथ सेवा' के द्वारा प्रस्तुत श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के हितवचन हैं।

15. अश्ववाहन

ब्रह्मोत्सव के आठवें दिवस के रात को वेङ्कटेश्वर स्वामी अकेले शिरस्त्राण धारण कर, खड्ग को हाथ में लिये योद्धा जैसे अश्ववाहन पर शोभायात्रा के लिए निकलते हैं। अश्व तेज रफ़्तार के लिए प्रतीक है। बहुत पूर्व समय से ही अश्ववाहन चालू है। केवल सफ़र के लिए ही नहीं, बल्कि रथों को चलाने के लिए भी रथों पर अश्वों को बांधते हैं। चतुरंग बल में इन घोड़ों का स्थान विशिष्ट और प्रधान भी है। अमृत प्राप्ति के

लिए जब सुर और असुर ने क्षीर सागर का मंथन किया, तब उसमें से उच्चैश्रवमु नामक अश्वराजा उद्भूत हुआ।

विष्णु के दस प्रसिद्ध अवतार हैं। उनमें कल्कि अवतार अंतिम अवतार है। पुराणोक्ति है कि कलियुग के अंत में विष्णु भगवान कल्कि रूप धारण करके हाथ में खड्ग लिये अश्व वाहनारूढ़ होकर दुष्ट जन का संहार करके, शिष्टजन संरक्षण कर धर्म की स्थापना करेगा।

''कल्किनम् तुरगारूढम् कलिकल्मषनाशनम्
कल्याणदम् कलिघ्नम् च श्रीनिवासम् भजेऽनिषम् ।।''

- 'अश्व पर अधिरोहण करनेवाला, भक्तों के कलिदोष का हरण करनेवाला, शुभ प्रदाता, दुष्ट कलिपुरुष का संहार करनेवाला, कल्कि भगवान के रूप में अवतरित होनेवाला श्रीनिवास भगवान को सदा सर्वदा नमन प्रसुत करता हूँ - इस प्रकार से देवशर्मा (आदित्य पुराण 3-33) ने अपने विचार प्रस्तुत किया। यजुस्संहिता (9-14) में अश्व को देश के प्रतीक के रूप में शुक्ल वर्णन किया गया है।

दोनों देवेरियों के संग श्रीहरि की शोभा यात्रा का वर्णन ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने अपने एक संकीर्तन में इस प्रकार प्रस्तुत किया -

वागे बलुवु दैवपुरायु नी
रागे जतनमु पराकेच्चरिके
मिंचुल दुरगमु मिन्नुल मोवग
नंचल गुरचल नाडगनु
कंचु मिंचुगा गक्कुन दोलिति
पंचास्त्र गरूड पाडेच्चरिके

पेक्कुन तेजिदु पेरेमु वारग
तोक्कनि चोटूलु दोक्कगनु
चुक्कलु मोवग सोम्पुग दोलिति
तोक्कुल देव वेच्चरिके
अंकवन्ने पादाब्जमु पदिलमु
वेङ्कटेश तिरुवीधुलनु
संकेलेक श्रीसति तोजेलगेडि
लंकेल जागु भला येच्चरिके **- 11- 2- 30**

किसी संदर्भ में, दूसरे कीर्तन में उन्होंने ऐसा कहा -

देव शिखामणि दिविजुलु वोगडग
वेवेल गतुल वेलसी वाडे
वीथुल वीथुल वेस दुरगमुपै
भेरिलु बल्लेमु चिरचिर दिप्पुचु
मोदमु तोडुत मोहन मूरिति
ये दिस चूचिन नेगी नाडे
कन्नुलु दिप्पुचु कर्णमुलु गदल
सन्नलरोगेनु चौकलिंचुचुनु
अन्निट देजि याड़ग देवुडु
तिन्नग वागेलु दिप्पी नाडे
वलगोन दिरुगुचु वालमु विसरूचु
निलिचि गुर्रमट नेर्पुलु चूपग
बलु श्री वेङ्कटपति यहो बलपु
बोलमुन सारेकु बोदली नाडे।। **- 2 - 93**

देव शिखामणि का यशोगान कर रहे देवता
सहस्रों रूपों में प्रकट है वह
गली गली में तेजी से घोडे पर
ढोल भाला जोर-से घुमाते
मोदसहित मोहन स्वामी
हर दिशा में घूमता चला
आँखें घुमाते कर्ण पुट हिलाते
धीरे-धीरे कमर को मोडा
वृत्त में धूमते, पूंछ को हिलाते
खड़ा घोडा कौशलता दिखाते
यही वेंकटेश्वर की शक्ति है

कलियुग की समाप्ति पर श्रीवेंकटेश्वर स्वामी अश्ववाहन पर कल्कि रूप धारण कर दुष्टों का नाश करके शिष्टों की रक्षा करके, धर्म की स्थापना करेंगे - इस विषय की सूचना देना ही अश्व वाहन का प्रयोजन है। पद्मावती - श्रीनिवास के पहला मिलन के समय श्रीनिवास अश्ववाहनारूढ था। 'पारूवेट उत्सव' के संदर्भ में भी श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी अश्व पर आरूढ़ होकर शिकार के लिये निकलते हैं। विष्णुदेव के हयग्रीव अवतार में आधा भाग (चेहरा) अश्व का ही है। कठोपनिषद् में इंद्रियों का अश्वों से तुलना की गई है। इसलिए, अश्व पर आरूढ़ होकर भ्रमण करनेवाला वेङ्कटेश्वर स्वामी इंद्रियशासक हैं। स्वामी की ही जैसे हमें भी अश्वों जैसी इंद्रियों को अपने अधीन में रखकर, हमको इंद्रिय शासक बनकर अपनी जीवन यात्रा को आगे बढ़ाना होगा श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का अश्ववाहन इसी का बोध कराता है।

चक्रस्नान

ब्रह्मोत्सव की समाप्ति के संदर्भ में नौवें दिवस सुबह को 'पल्लकी उत्सव' होता है। उसके उपरांत शुभ क्षणों में - शुभ मुहूर्त पर - चक्रस्नान का उत्सव मनाया जाता है। इस उत्सव का वर्णन अन्नमाचार्य ने इस प्रकार किया -

''तनिवार दिरूव नंदलमु सेव सेदु
अनुवुगा सेविन्चरो अमरुलु ऋषुलु
एदुरूगा गूचुंडि इद्दरू नंदल मेक्कि
कदिसि मीद बन्नामु गट्टिंचि
मुदमुन नोंडोरुलु मोमुलु चूचुकोंटू
इदिवो देवुलु देवुडेगेरू वीथुलु'' **- 15 - 189**

सदाचारपूर्वक सेवा करो अमर एवं ऋषियों
सामने बैठकर दोनों ही तख्तों पर विरजित
मुदित होकर एक-दूसरे के वदन को देखते
यहीं पर हैं देवता शोभायात्रा में निकलकर गलियों में
- 15 - 189

इस प्रकार अन्नमाचार्य ने पालकी में आमने - सामने बैठकर शोभायात्रा में निकलने वाले श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी और अलमेलुमंगा का मनमोहक दृश्य प्रस्तुत किया है।

ब्रह्मोत्सव का अंतिम कार्यक्रम 'अवभृथ' या 'चक्रस्नान' का होता है। यह यज्ञ की परिसमाप्ति पर किया जानेवाला अवभृथ स्नान ही है। यज्ञ पूरा करने के बाद अवभृथ स्नान करना हमारा प्राचीन सम्प्रदाय है

तथा शास्त्रोक्ति भी है। ब्रह्मोत्सव नौ दिनों के लिए यज्ञ की भाँति श्रद्धा युक्तरीति से, बड़े पैमाने में एवं वैभवपूर्वक मनाया जाता है। नौवें दिवस सुबह श्रीहरि के अवतार नक्षत्र यानी श्रवणा नक्षत्र के लगने के दिन चक्रस्नान कराया जाता है। 'सवम्' का अर्थ 'यज्ञ' होता है। उत्+सव-उत्सव का अर्थ होता है - उत्कृष्ट एवं श्रेष्ठ यज्ञ। इसलिए ब्रह्मोत्सवों का अंतिम अंश अवभृथम् (चक्र स्नान) होता है। अवभृथ उत्सव के वैभव को तरिगोंड वेंगमांबा ने निम्नलिखित रूप में वर्णन किया -

''चक्रत्ताल्वार को, हरि को, श्री-भू नीला को (आजकल श्रीहरि के साथ नीलादेवी दिखाई नहीं देती। स्वामी के दोनों ओर श्रीदेवी - भूदेवी रहते हैं।) पालकी में विराजित करके, विमान प्रदक्षिणा के मार्ग से होते हुए पुष्करिणी के कूल पर, वराह स्वामी मंदिर के आगे के मण्टप में विराजित करके, पंचामृत स्नपन तिरुमंजन(क्षीर, दधि, मधु, नारियल पानी, हल्दी से अभिषेक) चक्रस्नान, नैवेद्य समर्पित करके ब्रह्म आदि महानुभावों ने अवभृथ स्नान किया'' - वेङ्कटाचल माहात्म्यम्, 2-132.

वेङ्कटेश्वर स्वामी के उत्सवमूर्ति श्रीमलयप्प स्वामी, श्रीदेवी - भूदेवी के साथ पालकी में वराह स्वामी मंदिर के आंगन में पहुँचते हैं। इनके साथ, लेकिन अलग पालकी में चक्रत्ताल्वार (सुदर्शन चक्र) भी वहाँ आ पहुँचते हैं। तदुपरांत देवता मूर्तियों तथा चक्र का तिरुमंजनम् कराया जाता है। सबसे पहले मलयप्प स्वामी एवं दोनों देवेरियों को स्नान के वस्त्र पहनाये जाते हैं, तदुपरांत अर्घ्य, पाद्य, आचमन आदि समर्पित करके शुद्धोदक स्नान कराते हैं। उसके बाद गोक्षीर का अभिषेक, शुद्ध जल से अभिषेक कराया जाता है, धूप, दीप, कर्पूर नीराजन समर्पित किये जाते हैं। इनके बाद क्रमशः दधि, मधु, नारियल पानी, हल्दी से

अभिषेक करते हैं। तदुपरांत देवता मूर्तियों को धूप, दीप, नैवेद्य एवं कर्पूर नीराजन समर्पित किये जाते हैं। अंत में इन उत्सव मूर्तियों पर चंदन का लेपन करते हैं, तिलक लगाते हैं, तुलसी मालाओं से सुअलंकृत करते हैं। अचमनादि के बाद धूप, दीप, आरती, कुंभ आरती, नक्षत्र आरती, समर्पित करते हैं। इसके बाद सोने की थाली से सहस्र धाराभिषेक करते हैं। एक ओर श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी, चक्रताल्वार का स्नपन तिरुमंजन होता रहता है तो दूसरी ओर श्रीसूक्तम्, पुरुषस्क्तम् एवं भूसूक्तम् का पठन करते रहते हैं। अभिषेक पूरा होते ही वेदपठन भी समाप्त होता है। बाद में द्राविड पंडित नीराट्टम का पठन करते हैं। स्वामी को समर्पित अभिषेक जल को अर्चक स्वामी, 'पूतोभव' कहकर पहले अपने आप पर फ़िर सभी भक्तों पर छिडकते हैं। देवता मूर्तियों को वस्त्रों से अलंकृत करके नैवेद्य समर्पित करते हैं। अब अकेले सुदर्शन चक्रतालवार का स्वामी पुष्करिणी में पवित्र स्नान (चक्रस्नान) कराते हैं। वेङ्कटेश्वर स्वामी (मालिक) को उत्सव तथा अवभृथ (चक्रस्नान) चक्रताल्वार को (सेवक) करते हैं। सब कुछ विष्णु की माया है -

'अहो हि वैष्णवो धर्मः चित्रो वेङ्कट भूधरे।''

यानी वेङ्कटाचल का वैष्णव धर्म विचित्र है, आश्चर्यदायक भी! किन्तु भविष्योत्तर पुराण में ब्रह्मोत्सवों का वर्णन ऐसा प्रस्तुत है -

'जपद्भिर्वैदिकान् मंत्रान् सहितश्च द्विजोत्तमैः
चकारावभृथ स्नानं भगवानादि पुरूषः
स्वामि पुष्करिणी तीर्थे सर्वलोकैक पावने
अवतारदिने तस्मिन् नक्षत्रे श्रवणे प्रगे' - 14 - 63, 64

यानी स्वयं श्रीनिवास भगवान ने पुष्करिणी में अवभृथ स्नान किया था। उसी समय पर सभी अर्चक, सभी भक्त पावन पुष्करिणी में स्नान करके पवित्र बनते हैं। इसके उपरांत वेङ्कटेश्वर स्वामी, देवेरियाँ तथा चक्रताल्वार शोभा यात्रा के लिए निकलकर, तदुपरांत आलय में प्रवेश करते हैं।

अवभृथ स्नान के उपरांत, श्रीनिवास भगवान ने -

''श्रवणम्बुनंदु ना चक्रम्बुतोगूड
स्वामि पुष्करिणिलो स्नानमुलनु
सल्पुवारलु पूर्वजन्मंबुलनु जेयु
पापम्बुलनु बासि भाग्यवंतु
लै इहपरमुल यंदु सुखिंतुरू
ना पल्कु निजमुगा नम्मुडनि''

- वेङ्कटाचल माहात्म्यम्, 2 - 133

''श्रवणा के दिवस चक्र के संग
स्वामी पुष्करिणी में स्नान को
कराने वाले पूर्वजन्म में किये
पापों से मुक्त होकर भाग्यवान
बनकर इह-पर लोकों में सुख पायेंगे
मेरी वचनों पर विश्वास करो''

- वेङ्कटाचल माहात्म्यम्, 2 - 133

'श्रवणा नक्षत्र के दिन हाथ उठाकर सुदर्शन चक्र के साथ स्वामी पुष्करिणी में स्नान करनेवाले भक्त, अपने पूर्वजन्मों में किये पापों से

मुक्त होकर, भाग्यवान बनकर इह-पर लोकों में भाग्यवान बनकर सुखमय जीवन बितायेंगे। मेरे ये वचन सत्य होंगे, विश्वास करो' - इस प्रकार श्रीनिवास ने भक्तों से कहा।

ध्वजावरोहण

ब्रह्मोत्सव के नौवें दिवस को आलय में, रात को ध्वजावरोहण उत्सव मनाया जाता है। श्रीदेवी - भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी के समक्ष जब वेद पंडित, वेद का पारायण करते रहते हैं, तब मंगलवाद्य बजाये जाते हैं, मृदंग तथा ढोल बजाये जाते रहते हैं, ब्रह्मादि देवताओं को, दिक्पालकों को जब बिदाई दी जा रही होती है, तब ध्वज स्तंभ से गरूड केतन को नीचे उतारते हैं। इस प्रकार गरूड ध्वज को फ़हराकर ब्रह्मादि देवताओं, दिक्पालकों को आह्वान देने के साथ ब्रह्मोत्सव प्रारंभ होते हैं तथा गरूड ध्वज के अवरोहण के साथ-ब्रह्मादि देवताओं, दिक्पालकों को बिदाई देकर ब्रह्मोत्सव परिसमाप्त करते हैं।

ब्रह्मोत्सव के समापन के संदर्भ में श्रीनिवास भगवान जिस रागात्मक भाव से ब्रह्मादि देवताओं, दिक्पालकों को प्रेमपूर्वक विदाई देते हैं, उसका अत्यंत सहज वर्णन ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने इस प्रकार किया -

''भोगीन्द्रुलुनु मीरू बोइ रण्डु
वेगन मीदटि विभवालकु
हरूड पोइरा! अजुड नीवुनु बोइ
तिरिगिरा मीदटि तिरूनाल्लकु,
सुरलुमुनुलुनु भूसुरूलु बोइ रण्डु
अरविरि निन्नाल्लु नलसितिरि
जमुड पोइरा, शशियु नीवुनु बोइ

समुखुडवै रा सुरल गूडि,
गुमुलै दिक्पतुलु दिक्कुलकु बोइ रण्डु
प्रमदान निन्नाल्लु बड़लितिरि
नारद सनक सनंदनादुलु
भूरि विभवमुल बोइ रण्डु
दूरमुगा बोकिट्टे तोरलि वेङ्कटगिरि
जेरि नन्निटूलने सेविन्चुडी''

हे भोगीन्द्र! आप अभी जाइए
जल्दी से आपके अपने स्वस्थल पर
हे हरि! आप जाओ, हे अज! आप भी जाओ
लौट आइये अगले मेले में
हे सुर, मुनियों, हे भूसुर आप सभी जाओ
इतने सारे रात-दिन थक गये
हे यम! आप जाओ, हे शशि तुम भी जाओ
सुमुखी बनकर सुरों सहित पुनः आओ
समूहों में आये दिक्पति, आप सभी जाओ
काम करके थक गए हो आप सब
नारद, सनक, सनंदन आदि
सभी वैभव के साथ जाओ
बहुत दूर मत चलो, पुनः वेङ्कटगिरि
पहुँचकर मेरी सेवा ऐसा ही करते रहो

सभी देवताओं को बिदाई देने के बाद, श्रीवेङ्कटेश्वर विष्णुदेव ने भक्तों से ऐसा कहा -

''वर्षे वर्षे तु मासेस्मिन् कन्याराशिम् गते रवौ
ये केचिदत्र कुर्वन्ति ब्रह्मकृतोत्सवम् मम
ते यांति ब्रह्मणो लोकं भूमौ कामा नवाप्य च''

- वराह 51 - 26

हरवर्ष जब सूर्य भगवान कन्या राशि में, कन्यामास में संचार करता है, तब इस ब्रह्मोत्सव को जो भी कराते हैं, जो भी करते हैं, वे इस प्रसू पर समस्त सुखों को भोगकर, ब्रह्मलोक को प्राप्त करते हैं।

''अन्नदानम् प्रशस्तम् स्यात् विशेषेण महोत्सवे''

- इस महोत्सव के दिनों में अन्नदान करना श्रेष्ठ माना जाता है। अन्नदान करनेवाले इस भू पर समस्त सुखों को भोगकर, अंत में परमपद को प्राप्त करते हैं। इस वेङ्कटाद्रि पर शास्त्रोक्त पद्धति से जो सोलह (षोडष) प्रकार के दान करता है, वह मर्त्य लोक के सुखों का अनुभव कर अंत में मोक्ष को प्राप्त करेंगे। वेङ्कटाद्रि पर दान करने से जो फ़ल मिलते हैं, उस फ़लश्रुति का वराह पुराण ने उसका बोध कराया।

ध्वजावरोहण के उपरांत उत्सव मूर्तियों को नैवेद्य, कर्पूर नीराजन समर्पित किए जाते हैं। बाद में अर्चक स्वामी तथा आचार्य पुरूषों का सम्मान किया जाता है। तदुपरांत, मलयप्प स्वामी, श्रीदेवी-भूदेवी के साथ रंगनायक मण्टप में जा पहुँचते हैं।

ये उत्सवमूर्तियाँ ब्रह्मोत्सव के प्रारंभ में आनंद निलय के ध्रुवमूर्ति की सन्निधि को छोडकर, दीवाली तक इसी रंगनायक मण्टप में ही ठहरते हैं।

''.....यमरिन बाणविद्यति विचित्रतयु
हरि तिरूवीथुल नरिगेडि सोबगु''

श्रेष्ठलूरि वेङ्कटार्युडु ने अपने ग्रंथ 'श्रीनिवास विलास सेवधि' नामक द्विपद काव्य में ब्रह्मोत्सव वैभव एवं विविध उत्सवों का वर्णन उपर्युक्त शब्दों में किया।

कभी किसी समय पूर्व ब्रह्मोत्सव में पटाखे जलाये जाते थे। यह आजकल चालू नहीं है। एट्टूरू तिरूमल कुमार ताताचार्युलु नामक तिरूमल के आचार्यपुरूष ने चार ग्रामों से मिलनेवाले 720 रेखै पोन्नु वर्षिक आय को अल्पिशि ब्रह्मोत्सव तथा कैशिक द्वादशी को मनाने के लिए श्रीभण्डार को दान दिया। इस राशि में से 410 रेखै पोन्नु अल्पिशि ब्रह्मोत्सव मनाने के लिए निश्चित किया गया। इनमें से भी 20 रेखै पोन्नु (स्वर्ण मुदायें) पटाखों को जलाने के लिए तय किया था। देखिए दानशासन संख्या 5, पृष्ठ 5ः ति.ति.दे शासन, ताः25-9-1583. यह शासन तिरूमल मंदिर के तीसरे प्राकार के दक्षिणी दीवार पर अभिलिखित है।

ब्रह्मोत्सव के हर दिन शाम के छः बजे को - रात्रि उत्सव से पहले तिरूमल मंदिर के बाहर की आग्नेय दिशा में स्थित कोलुवु मंटप में सहस्र दीपालंकरण में श्रीदेवी-भूदेवी समेत मलयप्प स्वामी की ऊँजल सेवा समर्पित होती है। सहस्र दीपों के प्रकाश में स्वामी अपनी देवेरियों के संग झूला झूलते हुए, भांति-भांति के प्रकाश से प्रज्जवलित होकर भक्तों को दृगपर्वात्मक दर्शन प्रदान करते हैं।

श्रेष्ठलूरि वेङ्कटार्युडु (ई.के 17वीं शताब्दी) ने अपने ग्रंथ 'श्रीनिवास विलास सेवधि' नामक द्विपद काव्य में ब्रह्मोत्सव का वर्णन करते हुए, विविध वाहन सेवाओं का प्रयोजन, सार्थक्य का विवरण इस प्रकार प्रस्तुत किया -

''चेलुवोप्प नर्चिंचि श्रीनिवासुलुनु
शेषाधिरूढुगा जेसि तिर्वीथि
भूषण द्युतुल नुप्पोंग नेगिम्प
हरियप्पुडु तन शेषासनत्वमुनु
वर भक्तुलकु देल्पु वैखरि मेरसि
या मरूसटि नाडु हंसनिष्टु डइ
तामर चूलिकि दत्व बोधनमु
सलुपुट रूपिंचि सारे मर्नाडु
कलित सिंहस्थिति गनुपट्टि मुन्नु
बलुविडि युक्कु कम्बम्बुन वेडलि
खलु हिरण्युनि द्रुन्चु कक्कसि तनमु
रहि गनुपिंचि मर्नाडु लोकिम्प
महिसुतयुनु दानु महित पुष्पकमु
पइ नेक्किवच्चु टिभ्भंगियन् पगिदि
रयमुन विरिचिप्परमु मीद नलरि
गरूडुनिपै नेक्कि गजराजु बोरू
खर नक्रमुंद्रुन्चु गति निरूपिंचि
मरूनाडु ना हनुमंतु पै नेक्कि
करकु रावणु गूलचु कडकन्नटिन्चि
यन्त शत्रुंजयमनु नेन्गु नेक्कि
येन्तयु श्रीरामुडेनै ययोध्य
वेलसिति निट्लंचु विवरिंचि मरियु

नल सप्तम दिनंबु नंदु नंदमुग
जलजाप्त मंडल संरूढुडगुचु
....
नंत रादित्य विद्याधेयुडगुट
यंतयु ब्रकटिन्चि यद्भुत लील
यष्टम दिनमु नं दरदम्बु नेक्कि
दृष्टविजय सारथित्वम्बु देलिपि
यल मापु तुरग वाहनमुपै नेक्कि
कलि तुदनूम्लेच्छ निग्रहमु सेयंग
भूवि सारिनै इट्रूल पोसगुदु ननुचु
विवरिंचु गति तिरूवीथुल नेगि
नवम दिनमु नंदुन् मुकुंदुंडु
श्रीमदादि वराहु चेंगट जेरि
स्वामि पुष्करिणि पावन तीर्थवारि
नवभृथ स्नातुडै याश्रित दिविश
दवन दीक्षापूर्ति नदु जूपुटयुनु''

- श्रीनिवासविलाससेवधि, 6-1101-1140 पंक्तियाँ

''श्रीनिवास की अर्चना कर
शेषवाहन पर आरुढ़ित कर
आभूषणों एवं दीपालंकारों के साध
तब श्रीहरि शेषवाहन पर आसीन होकर
भक्तों के सामने प्रकट हुए
अगले दिन हंस की भाँति

कमल पर स्थित बिन्दु की विद्य का बोध कराते
उसके अगले दिन
सिंहवाहनारुढ़ होकर
स्तम्भ में प्रकट जिस भांति हुए
खल हिरण्य को मारने
अगले दिन
मही के भक्तों को दर्शन देने
स्वयं पुष्प पालकी पर आरुढ़ होकर
गंभीर मुद्रा में
पालकी के शिखर तक पहुँचकर
गरुड़ पर आरुढ़ होकर गजराज पर
आसीन होकर मकर को मारने जैसा
अगले दिन हनुमान पर विराजित होकर
रावण को मारने वाले जैसे दृष्टिगोचर होकर
शुत्र संहारक की भांति गज पर आरुढ़ होकर
अयोध्या के श्रीराम की भाँति
विवरण प्रस्तुत कर
सातवें दिन को आनंदमोद सहित
सूर्य की विद्या प्रस्तुत करते हुए
अद्भुत लीला को प्रकर कर
आठवें दिन को रथारुढ़ होकर
विजयप्राप्ति पर सारथी के गांभीर्य को दिखाते हुए
अगले दिन अश्व पर आसीन होकर
कलि पर अपना आधिपत्य जैसा

पृथ्वी पर मेरा अधिकार कहते हुए
तिरुवीथियों में विहार के लिए निकलकर
नवें दिन को मुकुंद
श्रीवराह के आंगन में जाकर
स्वामी की पुष्करिणी में
अवभृथ स्नान करके ऐसा दिखाई दे रहे हैं
मानो दीक्षा पूरी हुई है''

- श्रीनिवासविलाससेवाधि, 6-1101-1140 की पंक्तियाँ

पुष्पयाग

प्राचीन समय में नौ दिवसों के ब्रह्मोत्सव के बाद, दसवें दिन सवेरे पुष्पयाग किया जाता था। जाने-अनजाने किये गये दोषों के प्रायश्चित्त के लिए पुष्पयाग किया जाता है।

ध्वजारोहण तीर्थान्त प्रायश्चित्तम् तु यद्भवेत् ।
तस्य दोषविघातार्थम् पुष्पयागं च कारयेत् ।।

उपर्युक्त श्लोक का अर्थ है - उत्सवों में ध्वजारोहण से लेकर अवभृथ स्नान तक संपन्न कार्यक्रमों में कुछेक लोप या दोष हुए होंगे। कपिंजल संहिता में उन दोषों के निवारणार्थ, पुष्पयाग करने की आवश्यकता का दिशा निर्देश मिलता है। पुष्पयाग का कार्यक्रम ब्रह्मोत्सव के तुरंत बाद कार्तिक मास के श्रवणा नक्षत्र के दिन करने की जगह, उसे किया जाता है।

''अंत वैखानसुला युत्सवमुन
नंतरायमुल ब्रायश्चित्तमुगनु

श्रीनिवासुलकु विशेषार्चनमुलु
जानूरू कटिनाभि सद्वत्सबाहु
गल मुख मौल्यंत कलितक्रममुन
दलप बद्मादिक दशविधार्चनलु
गाविन्चि नल्देसक्रममुन निल्पि
भाविन्चि सूत्रोक्त परिपाटि सल्पु
पुष्पयागं बेन्ते बोलु पोंदनपुडे
पुष्पवर्षमु नभो भूजमुल् गुरिय''

- श्रीनिवासविलाससेवधि, 6-1141-1150 की पंक्तियाँ

वैखानसनुयायी उस उत्सव में
जाने अनजाने हुए कलंकों के प्रायश्चित्त के लिए
श्रीनिवास को विशेष अर्चनायें समर्पित कर
चरणों से होते हुए कटि, नाभि तथा भुजाओं तक
उसके ऊर्ध्व मुखडे तक एक क्रम में
पद्म एवं अन्यान्य फूलों से
क्रमिक रूप से अर्चना कर
परिपाटि के अनुसार सूत्रोक्ति का पठनकर
पुष्पयाग जब किया जाता है
नभ में पुष्टवृष्टि होती, भू पर जलकीवृष्टि होती

उपर्युक्त पंक्तियों में श्रेष्ठलूरि वेङ्कटार्युडु ने पुष्पयागोत्सव का वर्णन किया। ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने पुष्पयाग के वैभव का सांगोपांग वर्णन इस रूप में किया -

सकल लोकेश्वरूडु सरूस जेकोनुवाडु
अकलंकमुग बुष्पयागम्बु
विविध पुष्पमुलतो वेद घोषमुलतो
आवल दिरूवामुडियु नंगनल याटतो
कविवन्दि नुतुलतो कम्मबूजल तोड़
नवधरिंची बुष्पयागम्बु
कपुरपु टारतुल घन चंदनमु तोड़
तेप्पल धूमुल तिरूवंदि कापुतो
वोप्पक बण्यारमुलु वोगि चेक्कुवगलतो
अप्पडंदी बुष्पयागंबु **- 30 - 209**

सकल लोकेश्वर जो स्वीकारता
कलंक को दूर करनेवाला पुष्पयाग
विभिन्नफूलों से वेद पठन से
तिरुमोलि पठन एवं सुवासिनियों के नृत्य से
कवियों के वृन्द एवं विशेष पूजाओं के साथ
नवीन रुप से पुष्पयाग
कर्पूर आरती तथा चंदन सहित
प्लवन में धूप की ऊष्मा, सहित
शोभा तथा सौकुमार्थता युक्त
स्वामी स्वीकारता पुष्पयाग

पुष्पयाग में विभिन्न रंगों एवं गंधों के फूलों से स्वामी की पूजा करने के साथ-साथ वेदपारायण, तिरूवायमोलि का पठन, देवदासियों के नृत्य, संगीतज्ञों के संकीर्तनार्चन, विविध प्रकार के नैवेद्य समर्पित होते हैं।

पुष्पयाग का प्रथम प्रस्ताव 17-2-1446 के अभिलेख 1-220 में मिलता है जो कोइलकेल्वि एम्बेरूमानारू जीयर के द्वारा पुष्पयाग के लिए एक तिरूवोलक्कम् (प्रसाद) की व्यवस्था करवाते हुए लिखवाया गया था। ताल्लपाक पेद तिरूमलाचार्य ने अपने द्वारा व्यवस्थित आनि ब्रह्मोत्सव के संदर्भ में पुष्पयाग के लिए दस अतिरसप्पडि (परिमाण) के लिए आठ रेखे पोन्नु को तय करके अभिलेख 5-47, दिनांकः 3-7-1545 को लिखवाया। इनके बाद के अभिलेखों में पुष्पयाग का कोई सूचना-समाचार तक नहीं मिलता। संभवतः कई ब्रह्मोत्सवों की भांति सोलहवीं शताब्दी के बाद पुष्पयाग कार्यक्रम भी स्थगित हो गये होंगे। चार सौ वर्षों के बाद तिरूमल तिरूपति देवस्थानम् के अधिकारी, 14-11-1980 से पुष्पयाग का निर्वहण, ब्रह्मोत्सव के तुरंत बाद न करके, कार्तिक मास के श्रवणा नक्षत्र (वेङ्कटेश्वर स्वामी का अवतार नक्षत्र) के दिन, इस पुष्पयाग उत्सव का पुनरूद्धार करके, हर वर्ष बड़े पैमाने में वैभवपूर्ण ढंग से मना रहे हैं। पुष्प याग जो वर्षों तक रूक गया था, उसके पुनरूद्धार का श्रेय 1980 में कार्यरत कार्यनिर्वहणाधिकारी श्री पी.वी.आर.के प्रसाद जी को जाता है।

हर वर्ष, कार्तिक के श्रवणा नक्षत्र के दिन तिरूमल के मंदिर में नित्यप्रति चलायी जानेवाली सेवायें, दूसरी अर्चना, नैवेद्य के बाद, श्रीदेवी भूदेवी समेत श्रीमलयप्प स्वामी आनंद निलय से बाहर आकर संपंगि प्रदक्षिणा के मार्ग में स्थित कल्याण मंड़प की यागशाला पहुँचते हैं। वहाँ, याग पूरा होने के बाद उत्सव मूर्तियों का स्नपन तिरूमंजनम् करते हैं। उसके उपरांत, देवतामूर्तियों का श्रृंगार बड़े पैमाने पर करके उनको महाशेषवाहन पर विराजित करते हैं। अब पुष्पयाग किया जाता है। वेद

मंत्रोच्चारण, वंदिमागधों के स्तोत्र पठन के साथ, ऋत्विकों के वेदपठन जब किया जा रहा होता है, तब उत्सव मूर्तियों के चरणों से लेकर हृदय तक फूल जब भर जाते हैं, तब तक यह पुष्पार्चना होती रहती है। अब धूप-दीप-नीराजन समर्पित करके जमे हुए फूलों को मूर्तियों के चरणों तक समायोजन करके पुनः पुष्पाराधना करते हैं। पुनः समायोजना, बाद में पुष्पाराधना - इस प्रकार बीस बार पुष्पांजली समर्पित होती रहती है। इसके उपरांत कर्पूर नीराजन तथा नैवेद्य समर्पण होता है। इनकी परि समाप्ति पर उभय देवेरियों के साथ मलयप्प स्वामी स्वर्ण पालकी पर आरूढ़ होकर, शोभा यात्रा में निकलकर आनंदनिलय में प्रवेश करता है। इसके साथ पुष्पयाग महोत्सव समाप्त होती है।

सोलहवीं शताब्दी के काकमानि मूर्ति कवि ने 'राजवाहन विजयं' नामक प्रबंध काव्य में वेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सवों का वर्णन इस प्रकार किया है -

प्रजल गाननि वानि पायसंबनु सुद्दि
तुनुमवा दृष्टियन्धुनकु निच्चि
गोड्रालेरूंगने बिड्डु कुट्टनुटमा
न्पिम्पवा वन्ध्यकु निसुवोंगि
तूलिम्पवा येद्दु द्रोचिन पिच्चुगुं
टनु पल्कु परूवु पंगुनकु नोसगि
पापवा चेविटिकि बट्टिन संकनु
नानुडि बधिरू विनंग जेसि
यनुचु जनु वेङ्कटाचलाध्यक्षु जलरू
हाक्षु लक्ष्मी विशुद्ध शुद्धांत वक्षु

ब्रह्म तिरूनाल्ल करूदेंचि फलमु गांचि
कटक कल्याण ढिल्ली निकट जनंबु

श्रीहरि के ब्रह्मोत्सव में चारों दिशाओं से आनेवाले भक्त मुख्यतथा दिल्ली, कटक एवं कल्याण शहरों से आनेवाले भक्तगण श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी का यशोगान ऐसा करते रहते हैं - ''तुमने अंधे को दृष्टि प्रदान की, बंजरमूल को संतानवती बनाया, लंगड़े को चलने की शक्ति प्रदान की, बधिर को सब कुछ को सनने योग्य बनाया।''

ब्रह्मोत्सव के लिए तिरूमल आनेवाले यात्रियों को तिरूमल के निवासी, धनवान, दाता कहलाने वाले भक्तगण, अतिथि के लिए समर्पित सुविधाओं, अतिथि सत्कार को सत्रहवीं शताब्दी में गणपवरपु वेङ्कटकवि ने अपने प्रबंध काव्य 'प्रबंध राजविजय वेंकटेश्वर विलासमु' में निम्नलिखित रूप से वर्णन किया -

बडलिनवारिकि वडपप्पु पानका
लनटि पण्ड्लोपिन यन्नि गलवु
येलनीरू बिसनीरू लेन्दु हेरालम्बु
नीरूचल्ल बेरूगपार मचट
गप्पुर गंधंबु कैरवल्पट्टीलु
तट्टु पुनुंगुनु जुट्टु पूवु
लेन्दु वेडिन वेल्ल ये चप्परंबुन
विप्पैन गोड्डुगुलु विसनकर्र
लेलकुलु शोन्ठियुनु लवंगालु पनस
तोललु चेरूकुलु खर्जूर फ़लमु लेन्नि

वेडिननु गोंडनुचु जादु वेङ्कटेशु
भक्तजालम्बु तिरूनाल्ल प्रजकु नपुडु

व्याकुल यात्रियों के लिए मूंगदाल व गुड़रस
अन्यान्य फ़लों को
नारियल पानी, गर्म पानी
पानी, छाछ, दही देते
कर्पूर, चंदन, तालवृंत
पुनुगु आदि सुगंधित पदार्थ
हर आवास में किसी भी समय को
देते थे छत्रियाँ वतालवृंत
इलायची, सोंठ व कटहल फ़ल
गन्ना एवं खजूर के फ़ल
वेङ्कटेश्वर की स्तुति करने पर
मेले में आये भक्तों को सबकुछ मिलता

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सवों में तिरूमल आनेवाले भक्तों के लिए, तिरूमलवासी व वेङ्कटेश्वर के भक्त, यात्रियों के लिए पानी की व्यवस्था, छाछ की व्यवस्था, भोजनालय आदि की व्यवस्था करके, माधव पर जो श्रद्धा-भक्ति है, उसको मानव सेवा पर उतारते थे। यह सत्रह्वीं शताब्दी में प्रस्तुत अतिथि सेवा की प्रक्रिया थी। अब इक्कीसवीं शताब्दी में हम आ पहुँचे हैं। अब तिरूमलवासियों के साथ-साथ तिरूमल तिरूपति देवस्थानम् के कर्मचारी भी यात्रीगण की यथाशक्ति सेवा कर ही रहे हैं। मुफ्त आवास, मुफ्त भोजन, दूध आदि को यात्रियों के लिए जुटा रहे हैं।

श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी के ब्रह्मोत्सवों को प्रत्यक्ष देखनेवाले भक्तजन उमापति को साक्षी बनाकर, वेङ्कटाद्रीश का कीर्तिगान यथा प्रस्तुत करते हैं -

''वेङ्कटाद्रिकि नुद्दि विष्णु स्थलंबु
वेङ्कटेश्वरूबोलु वेरे दैवतमु
सत्यंबुगागनेच्चट लेदु लेदु
प्रत्यक्षमुग नुमापति साक्षियिन्दु''

वेङ्कटाद्रि नामक विष्णु का स्थल
वेङ्कटेश्वर जैसे दैव
सत्यपूर्वक दूसरा नहीं नहीं
प्रत्यक्ष रूप से उमापति ही साक्षी यहाँ

भक्तजनप्रिय, आश्रितों का कल्पवृक्ष, श्रीवेङ्कटेश्वर स्वामी को -

''अभिवादनमु वृषभाख्य महाहार्य
नव्य कूटाग्र वास्तव्युनकुनु
दण्डम्बु गरूणाभिधान शैलमणी वि
भासमान स्वर्णभवन भर्त
कंजलि शेषनामाधिक्य धरणीध
रादित्यका गृहमेधि मणिकि
विनति श्रीवेङ्कट विख्यात नामधे
याचल हेमगेह कुलपतिकि
चिन्नि पूवंजनाद्रि प्रसिद्ध निधिकि
शरणु गुह सरसी केलि सक्तमतिकि

मोड्रूपुगेलु त्रिमूर्तुल मोदलि दोरकु
वेंडियु जोहारू विनत वेदंडुनकुनु''

वृषभाचल के निवासी को मेरा प्रणाम। करूणाद्रि नाम से पुकारे जानेवाले पहाड़ पर विराजमान स्वर्णनिलयपति को मेरा नमस्कार। शेषाचलम् पर विराजमान गृहस्थ को मेरा नमन। वेङ्कटाद्रि के स्वर्णगृह-आनंद निलय के निवासी को मेरा नमस्कार। अंजनाद्रि के कल्पनिधि को नमन। (कुमार) स्वामी पुष्करिणी में क्रीड़ा करने के इच्छुक स्वामी को मेरा प्रणाम। त्रिमूर्तियों में से मूल देवता को मेरा प्रणाम। गजेन्द्र रक्षक को मेरा नमस्करार। इस प्रकार भगवान के गोत्र-नामों की स्तुति कर, छूकर प्रणाम करके भगवान से बिदाई की अनुमति लेकर, स्वामी दर्शन से संतुष्ट हृदयी बनकर अपने घर वापस लौटते हैं।

''अस्ति कल्पद्रुमः कोपि जातरूपलतावृतः ।
वेङ्कटाद्रि शिखारूढः स्मरतां परमार्थदः ।।''

* * *